भारत एवं राजस्थान सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिए मान्यता प्राप्त

आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2023-2025

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जनसंवाद का पाक्षिक

वर्ष 10 | अंक 13 | उदयपुर सोमवार 15 जुलाई 2024 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

उठो राणी रूकमण पूजो पथवारी

– डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' –

जहां कहीं से कोई लोग तीर्थ यात्रा पर गए हों, वहां पथवारी होती है। गणपति, रिद्धि-सिद्धि, कावड़धारी श्रवणकुमार, मंगल कलश, काला और गोरा भेरू, गंगा की लहरें, मकर सवार गंगा, कूर्म सवार यमुना जैसे कुछ चित्र या उभरांकन वाली पथवारी की सज्जा होती है। 19वीं सदी में अनेक पथवारियां बनी। तब यात्रा पालकी, घोड़ा या खच्चर, नरयान आदि से की जाती और समूह में होती थी। यात्रियों को परस्पर विश्वास के साथ ईश्वर का अवलंबन रहता।

जहां खेतिहरों की बस्ती हो और जहां से यात्री संघ तीर्थवास या तीर्थाटन के लिए जाते हों, वहां पथवारी देवी की रचना और पूजा अर्चना अभाव में रक्षा भाव का आध्यात्मिक गणित लिए होती है। इस पाषाणमय स्तम्भ या चौकी का मानवीकरण इस रूप में भी है कि उस पर साड़ी की छांव कर नारी का कोमल मन यह कामना करता है कि उनके यात्री परिजनों को तीर्थ में कहीं गरमी न सताए। वे वहां जौ बोती हैं ताकि तीर्थवासी कभी भूखा न रहें। वे जल सींचती हैं ताकि तीरथिये कभी प्यासे न रहें।

पथवारी अथवा पंथवारी भगवती है। पथ की देवी है। पथ की धरयानी, पंथ की धृतिका! जो पथ में रक्षा करे : या देवी सा रक्षयेत् पथे। पीठवारी वह जो पीठ पर विराजे और पथवारी वह जो वहां मौजूद रहे, जहां रास्ते में उसकी जरूरत पड़े। देवी की व्याप्ति गुण और शील के रूप में तो है ही, आयुध और बल के रूप में भी है। भय, रक्षा के भाव से भी प्रेरित होती है।

इसका अपना कोई रूप नहीं। चौकोर, गोल, आयताकार, वर्गाकार जैसी सुभद्र रूप में पुरुष प्रमाण ऊंची चौकी या स्थण्डिल। एक, दो या तीन मंजिली, मेढ़ी वाली रचना। जहां कहीं से कोई लोग तीर्थ यात्रा पर गए हों, वहां पथवारी होती है। गणपति, रिद्धि-सिद्धि, कावड़धारी श्रवणकुमार, मंगल कलश, काला और गोरा भेरू, गंगा की लहरें, मकर सवार गंगा, कूर्म सवार यमुना जैसे कुछ चित्र या उभरांकन वाली पथवारी की सज्जा होती है।

हर घर की अपनी पथवारी। जहां जितना समाज, उतनी पथवारी। संपन्नों की नहीं, अधिकतर विपन्नों की मिलती है। क्यों? कच्ची और पक्की। सबका अपना-अपना स्थापत्य, रंगाई पुताई और चित्रण की विधियां! दीपदान का आलिया, मेढ़ी वाला मालिया और ऊपर कंगूरे। मिट्टी की पथवारी पीली मृदा से लीपी जाती है और पाण्डु पोता जाता है। इसमें कोई बीज नहीं बोया जाता। तुलसी लगाएं तो वृंदावन या तुलसी क्यारा हो जाता है। सुबह-शाम जल और संध्या वेला में दीपदान। मां को ऐसा करते मैंने 1972 में देखा जबकि दादाजी बद्री-केदार की यात्रा पर निकले थे।

यात्रा जितनी अवधि की हो, तब तक नित्य उसको जल चढ़ाया जाता है। यह पथवारी सींचना है। वापसी का पता चल जाए तो पीपल को भी सींचा जाता है। साड़ी- लुगड़ी ओढ़ाकर छाया की जाती है ताकि गर्मी में उनके पांव जले नहीं। यह छाया करना है। लोक का मंगल स्वर है-

ओ पगलिया थारा दाझे जी मेवाड़ी राजा पाड में,
ओ पगलिया थारा दाझे जी मेवाड़ा झीनी रेत में,
सालुडे री छांव करूं, पथवारी माता सहायजे...।

आशय है कि गर्मी बढ़ रही है और घर के वरिष्ठ सदस्य तीर्थाटन पर हैं। पहाड़ों की चढ़ाई हो या गंगा तीर की झीणीरेत। उनके पांव नहीं जले, इसी कामना से हे पथवारी माता! तुम्हें अपने आंचल से ढांक रही हूं, सहायता करना! (लोकमाता पथवारी) जब भी कोई समूह तीर्थ पर जाता है, पथवारी की सेवा होती है।

अमूमन यह समय गर्मी का होता है। पश्चिमी राज्यों का आकर्षण उत्तराखण्ड ही होता है। 16वीं शताब्दी में रानियां राजकुमारों के साथ यात्रा पर निकलती थीं लेकिन रेल के आगमन के बाद सबके मन में यात्रा के प्रति आकर्षण जागा। इसीलिए 19वीं सदी में अनेक पथवारियां बनी। तब यात्रा पालकी, घोड़ा या खच्चर, नरयान आदि से की जाती और समूह में होती थी। यात्रियों को परस्पर विश्वास के साथ ईश्वर का अवलंबन रहता। गांव की पथवारी कैसे परभौम में सहायक होती! विश्वास के पांव नहीं, प्राण होते हैं।

महिलाएं मंगल कामनाएं लिए पथवारी से जुड़े सब अनुष्ठान करती हैं। वे वेदों में सुमंगली कही गई हैं - सुमंगलीरियम्। मंगल का हर भाव उनसे। वे ही अपने आत्मिक भाव से पथवारी महारानी से यात्रियों की कुशलता चाहती हैं और चाहती हैं कि मार्ग में कहीं कोई व्याधि नहीं आए, चोर-गिरोह, तस्कर आतंक, हारी-बीमारी, धौंस पट्टी... सब से सुरक्षित रहें और सानन्द गंगाजली और गंगामाटी लेकर लौटें।

लौटने पर पथवारी पूजन होता है। रात्रि जागरण दिया जाता। गंगाजी के गोरा भेरू (गोलू देव) के नाम डांगड़ी रात जगाई जाती है। सामाजिक भोज होता है। कृषिजीवी अनेक जातियों में यह आयोजन सबसे बड़ा माना जाता है। गंगोज के नाम से गंगा प्रसादी कभी देखी है? गंगा हर नारी की काया में अंगा होती है। वे सिर पर गंगाजल के कलश को धारण करती हैं। गंगाजल छलका कर वे गांव के हर रास्ते को पवित्र करती हैं। कई बार रुकती हैं लेकिन सिर घूमता रहता है। पानी सब छलक कर समाप्त हो जाता है। तब लौटे हुए यात्री बीच राह में नारियल फोड़कर गंगा का जयकारा लगाते हैं और स्त्री को चंगा करते हैं। लोक की यही कामना श्लोक रूप में देवी कवच का हिस्सा हो गई। याद आता है ना-

पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वत: स्थिता।।

कभी देखा है यह सब! पथवारी की महिमा शास्त्रों में नहीं, लोककण्ठ पर मिलती है। यात्रीगण बताते हैं कि कैसे उन्हें राह मिली? कैसे किसी आतंक अथवा कहर से बचे! वे भावुक होकर कहते हैं - पथवारी माता सहायक होती है।

शहर से तो यह भाव खत्म हो गया लेकिन देहात में अभी बचा है। देहात में पथवारी की कहानी लोकव्रत कथा के रूप में कही जाती है। ब्रज की एक कहानी है-

एक थी गूजरी। अपनी बहू से बोली- 'जा और दूध-दही बेच के आ।' बहू बेचने चली तो रास्ते में देखा कि औरतें पीपल पथवारी सींच रहीं थीं। उनको देखकर बहू ने पूछा कि वे क्या कर रही हैं? और, इससे क्या होता है? औरतें बोली, 'हम पीपल पथवारी सींच रही हैं। इससे अन्न और धन होता है। लाव लश्कर होता है। बारह-बारह बरस का बिछुड़ा पति मिल जाता है।' बहू बोली, 'ऐसी बात है! तुम पानी से सींचती रहो, मैं दूध से सिंचूंगी।' गूजरी बहू रोजाना दूध-दही बेचने तो निकलती लेकिन दूध को पीपल में और दही पथवारी में सींच आती। सास दूध-दही का दाम माँगती तो कह देती महीना पूरा हो जाने पर लाकर दूँगी।

कार्तिक का महीना पूरा हो गया। पूनम आई। बहू पीपल और पथवारी के पास जाकर बैठ गई। पथवारी पूछने लगी, 'मेरे पास क्यों बैठ गई?' बहू बोली, 'सासू को क्या मुंह दिखाऊं, दूध-दही की बंधी माँगेगी।' पीपल पथवारी बोली, 'मेरे पास क्या दाम रखा है। ये रहा भरा, डींडा पान पतूरा इसको ले जा।' बहू ने ले जाकर कोठरी में रख दिया और डर के मारे दोवड़ ओढ़कर सो गई।

सासू बोली, 'बहू! पैसे ले आई?' बहू बोली, 'कोठरी में रखे हैं।' सासू ने कोठरी खोल के देखी। देखा उसमें हीरा-मोती जगमगा रहें है। सासू बोली, 'बहू! इतना धन कहाँ से लाई?' बहू ने आकर देखा तो सच में ही धन भरा हुआ मिला। बहू ने सास को सच सच बता दिया। सास ने कहा, 'अगले कार्तिक में मैं भी पथवारी सिंचूँगी।' कार्तिक आया। सास दूध-दही तो बेच आती हांडी धोकर पीपल पथवारी में चढ़ा देती।

आकर बहू से कहती, 'मेरे से दाम मांगो।' वह कहती, सासूजी कोई बहू भी दाम मांगती है। मगर सासू कहती, तू माँग। बहू बोली, सासूजी पैसे ले आओ तो सास पीपल पथवारी के पास जाकर बैठ गयी। पीपल पथवारी ने सास को पान पतूरा भरा डींडा दे दिया। उसने ले जाकर कोठरी में रख दिया। बहू ने खोलकर देखा तो उसमें कीड़े-मकोड़े बिलबिला रहे हैं। बहू ने कहा सासूजी यह क्या? सास ने आकर देखा और बोलने लगी पीपल पथवारी बड़ी दोगली पटपीटन है। इसको तो धन दिया मुझको कीड़ा-मकोड़ा दिया। तब सब कोई बोलने लगे कि बहू तो सत् की भूखी सींची थी। तुम धन की भूखी।

हे पथवारी माता जी! जैसा गूजरी बहू को हीरा-मोती दिए वैसा सबको देना और जैसा सास को दिया वैसा किसी को ना देना। पथवारी माता की जय।

आजकल गांवों में पथवारियों को साड़ी ओढ़ाने की प्रथा बची है। वहां तीर्थाटन पर गए परिजनों की कुशलता की कामना से मंगल गीत भी गाये जाते हैं।

सर पे छप्पर नहीं मगर महलों से बड़े ख्वाब

राजवंशों की जागीर खत्म होते ही पिताजी और मेरी नौकरी भी खत्म। फिर वही संघर्ष और रोजी रोटी की तलाश। मुझे चौमू में बोहराजी की स्कूल में पिताजी ने डाल दिया था। शायद वो अपनी अधूरी पढ़ाई का सपना पूरा करना चाहते थे। यहीं मुझे पूज्यनीय गुरु श्री गोविंद शास्त्री मिले। उन्होंने फ्री ट्यूशन पढ़ाया और सांप्रदायिक सद्भाव का पहला गुरु मंत्र दिया।

पिताजी को सहारिया स्कूल कालाडेरा में, संगीत अध्यापक और सिलाई प्रशिक्षक की नौकरी मिल गई। मुझे भी उन्होंने वहीं चौथी कक्षा में भर्ती करा दिया। पिताजी रोज साइकिल से मुझे स्कूल लेकर जाते और शाम को हम वापस आते। जब 10वीं कक्षा तक आया तो मैं उनको साइकिल पर बिठा कर चौमू से काला डेरा लाता। मेरे हाथों पर आज भी वो निशान चरागों की तरह जलते हैं।

पिताजी का एक सपना पूरा हुआ, 1964 में मैंने हायर सेकेण्डरी परीक्षा पास करली। वो ही मध्यम श्रेणी के अभाव, हमारे सामने भी थे। पिताजी मुझे कॉलेज भेजने की स्थिति में नही थे। प्रिंसिपल साहब, आर के एल भट्ट नागर साहब से कहकर मेरी नौकरी उसी स्कूल में अध्यापक रूप में लगवादी जहां मैं पढ़ रहा था, 60 रुपए मासिक वेतन रखा गया।

अधूरे सपनों का एक सुखद भविष्य का हौसला लेकर, जीवन के कर्म क्षेत्र में कूद पड़ा। मां की आखों में झिलमिलाता हुआ अपार स्नेह सागर और पिता के पुरुषार्थ का अटूट विश्वास लेकर जीवन पथ पर निकल पड़ा....

कई तूफान यूं तो ,सामने थे।
हम अपना हौसला ले कर खड़े थे।।
हमारे सर पे, छप्पर भी नहीं थे।
हमारे ख्वाब, महलों से बड़े थे।।

-इकराम राजस्थानी

पोथीखाना

लोकपात्रों का काव्य प्रवाह

परम्परा किसी संस्कार से कम नहीं, हित संधारण उसकी पीठिका होती है। लम्बे व्यवहारों और अवसरों की आनुभविक संचेतना परम्परा का सार्थवाह होती है। यह ऐसा मूल्य है जो अनायास निर्मित होता है, जिससे स्वाभाविक निष्पत्तियां निकलती हैं और मर्यादा के आकार में आकर खड़ी हो जाती हैं किन्तु एकदम से इन्हें यथार्थ और अकाल्पनिक कह देना प्रयोगों की वैज्ञानिकता के विरुद्ध भी है। तभी इन्हें मनोरंजन के निश्छल उद्यम कहकर जीवन की पुरातनता समझी जाती है। महेन्द्र नारायण राम इस पुरातनता को समझने के लिए लोक की आस्था समझते हैं। वह तत्कालीन जीवन और परिवेश से संचरित होनेवाले उन कारकों के प्रति अविश्वास करने में रुचि नहीं लेते,जो वैज्ञानिक मानवशास्त्रियों की समाज संहिता हो सकती है। महेन्द्र नारायण राम निश्छल अभिजनेतर मान्यताओं की व्याख्या में उस सीमा तक नहीं जाते, जहां विश्वास की अनुपलब्धता हो और उन लोककलाओं के प्रति उपजने वाले सम्मान भाव में विघ्न पड़ता हो। वास्तव में महेन्द्र नारायण राम लोकपरम्परा के अयाचित अनुग्रह के प्रति विनत हैं, लोकभावना उनकी समष्टिहितेष्णा का अविच्छिन्न प्रवाह है।

महेन्द्र नारायण राम जिन दिनों बिहार की मैथिली अकादमी के अध्यक्ष थे, उन्हीं दिनों मेरा उनसे परिचय हुआ था। बाद में जब वह डायट के व्याख्याता होकर पूसा में आये, तो हम दोनों ने कई सम्पादित पुस्तकों का मिलजुलकर प्रकाशन कराया। वर्ष 2015 में उनके लेखन और लोकपरम्परा व्यसन, व्याख्या और विमर्श के प्रयासों से सुसज्जित व्यक्तित्व पर मैंने एक मूल्यवान पुस्तक का संपादन किया था 'खुटौना के नीलकमल'।

डॉ. महेन्द्र नारायण राम को निकट से जानने वाले लोगों को पता है कि उनका जीवन संघर्षों से शुरु हुआ। नाटकों और लोकमंचों के माध्यम से वह लोकवृत्त की परिधि समझते रहे। लोकगायकों से जुड़े, कला की ग्रामीण संकल्पनाओं के आशय समझने में उन्होंने पूरी उम्र खपा दी। वह पेंटिंग और चित्रकला से भी जुड़े रहे। पेंटर महेन्द्र नारायण राम का नाम नीलकमल था। यहीं से उन्होंने कला सम्बन्ध जोड़ा था। वह खुटौना (मधुबनी) के मूल निवासी हैं। मैथिली लोकसाहित्य और उसके हिन्दी विमर्श पर उनकी करीब दो दर्जन किताबें प्रकाशित हैं। उन्हें साहित्य अकादमी का अनुवाद पुरस्कार मिल चुका है। वह जमीन से जुड़े हुए कलाव्रती हैं। उनका जीवन कला और लोक के आपसी संबंधों के पक्ष में समर्पित रहा है। हाल ही में उनकी पुस्तक 'लोक काव्य कुसुम' का प्रकाशन अनुप्रास प्रकाशन, मधुबनी ने किया है।

'लोक काव्य कुसुम' में करीब साढ़े तीन दर्जन लोक परम्परा के पात्रों पर मैथिली में कविताएं हैं। इस पुस्तक की भूमिका बिहार प्रशासनिक सेवा के अधिकारी रहे वरिष्ठ मैथिली लेखक डॉ. रंगनाथ दिवाकर ने लिखी है। कविताएं अतुकांत हैं अर्थात छंदरहित। ऐसी कविता को अकविता कहकर रंगनाथ दिवाकर ने इनके शिल्प से असहमति जतायी है परन्तु वे लोक की वाचिक संकल्पनाओं का शास्त्रीय और लिखित प्रमाण खोजने के लिए बहुत परिश्रम करते हुए दिखे हैं। उनके लेखकीय जीवन में आज भी उनका परिश्रमी शोधार्थी किसी विनम्र विद्यार्थी की भांति सहभाग करता है। डॉ. महेन्द्र नारायण राम की इस पुस्तक की भूमिका डॉ. रंगनाथ दिवाकर ने बेमन से लिखी, लेकिन लोकपरम्परा के अविजित पात्रों के गत्वर इत्र ने उन्हें सुबासित कर दिया, उनकी निश्छल रम्यता में वह डूब गये।

समाज में कोई व्यक्ति सामान्य रूप से जन्म लेता है। उसके कर्म उसे असामान्य बनाते हैं। कर्म उन्हें जैविक जीवन के पश्चात सम्मान श्रुति का एक और जीवन देते हैं। यहीं से उन्हें लोकविधाएं अपना विषय बना लेती हैं। अपनी असाधारण शक्ति, अपने सामाजिक सदाचार और सहिष्णुता संवेदनशीलता के कारण ये लोक के काव्य का गंधिल कुसुम बन जाते हैं। डॉ. महेन्द्र नारायण राम की खासियत है कि वह लोकगाथा गायक भी हैं और लोक आस्था के आसनों पर आरूढ़ लोकदेवताओं की कथा मान्यताओं की रुचियां संरक्षक भी। इस पुस्तक में उन्होंने ऐसे ही लोकपात्रों? के जीवन और कार्य व्यवहार को रखा है।

लोकपात्रों से सम्बन्धित श्रुतियों का आशय या सार प्रस्तुत किया है। लोककलाओं में रुचि रखने वाले लोगों के लिए इस पुस्तक को आधार सामग्री बनाया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि लोकगाथाएं छंदविहीन रही हैं। लोककण्ठ की लय ने उन्हें छंदयुक्त करने की औपचारिकता नहीं निभायी। 'लोक काव्य कुसुम' के कवि भले उस औपचारिक शास्त्र निबद्धता के आग्रह से अलग हों, परन्तु वह लोकगाथाओं की उस पारम्परिक कायिकता से भी अलग हैं। 'लोक काव्य कुसुम' परम्परा के प्रकारों से जोड़ने वाली पुस्तक है। उसकी गंध अयाचित अनुग्रह है। उस गंध का संसर्ग सामान्यत: अलभ्य रह जाता है। यह गंध संरक्षण डॉ. महेन्द्र नारायण राम को बहुत सम्मान का अवसर दिलायेगा, आशा है। अनुप्रास प्रकाशन, इंद्र परिसर, लहेरियागंज, मधुबनी से प्रकाशित इस पुस्तक का मूल्य 400 रूपये है।

- अश्विनीकुमार आलोक

लोकगीतों में सीता का निर्वासन

- डॉ. मृत्युंजय उपाध्याय -

रावण पर विजय कर राम लौटते हैं- प्राणप्रिया, पुनीता सीता के साथ। उसकी होती है अग्नि-परीक्षा। कहा जाता है कि असली सीता तो पहले ही धरती में समा गई थी और उसका प्रतिरूप ही वन गमन और हरण का पात्र रहा। लोकजीवन के समक्ष मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने यह सिद्ध करना चाहा कि नियमों के वे इतने सख्त पाबन्द हैं कि अपनी पत्नी तक को नहीं छोड़ते और हो गई सीता की अग्नि परीक्षा।

प्रतिरूप जल गया आग में और मौलिक सीता निर्विकार आ गई बाहर। इस पर विश्वास नहीं भी करें, तो यही मानकर चलें कि कठोर हृदय राम ने अपनी पत्नी की सरेआम अग्नि-परीक्षा करवाई। राजा दशरथ ने स्वर्ग से कहा- 'राम, मैं अपने समस्त पुण्यों को साक्षी मानकर कहता हूं कि सीता निर्विकार है, अग्नि के समान पवित्र है। रावण ने सीता को उसी प्रकार रखा है, जिस प्रकार पुत्र अपनी बूढ़ी माँ को रखता है।' ध्यान कहां दिया राम ने इस ओर। जो भी हो, सीता सफल हो गई।

परन्तु फिर सीता का निर्वासन। कहते हैं दुर्मुख धोबी के प्रवाद के कारण सीता निर्वासित की गई तो क्या जनमत के आगे राम ने घुटने टेक दिए? अपनी छवि को उजागर करने के लिए गर्भिणी सीता की व्यथा का जरा भी ध्यान नहीं रहा उन्हें?

धोबी के प्रवाद की बात भारतवर्ष की अनेक रामायणों में सीधे या प्रकारांतर से पुष्ट होती है, परन्तु लोकजीवन कुछ अलग ही मानता है। इसकी अभिव्यक्ति लोकगीतों में बड़ी मार्मिकता के साथ हुई है। इन गीतों में ध्यान देने की बात यह है कि सभी एकमत हैं कि राम का अहंकार, निरंकुशता, पत्नी पर एकाधिकार का भाव ही पुन: निर्वासन का कारण हुआ।

काठियावाड़ी लोकगीत का एक उदाहरण। लंका से लौटने पर एक दिन बातचीत के सिलसिले में सास ने अनुरोध किया सीता से- 'बहू जरा लंका का चित्र खींचकर दिखा दो। कैसी है वह सोने की लंका।' लंका का नाम सुनकर सीता का चेहरा भय से पीला पड़ गया। वह पीपल पत्ते के समान थर-थर कांपने लगी। सास ने फिर आग्रह किया- 'मैं नहीं जानती बहू लंका कैसी दिखती है। चित्र उरेहकर दिखा दो न!

बहू रे बहू मारी समरथ बहू
लंका लखि देखाड़े।
हूं रे न जाणूं मारी बाई जी रे
लंका केम लखा शे.....।

विवश होकर खींच दिया सीता ने चित्र लंका का, उसमें रावण का आ जाना स्वाभाविक था। यह कारण बन गया राम के क्रोध का। भला वह यह कैसे स्वीकार करते कि सीता उनके शत्रु का चित्र अंकित करे।

पता नहीं वह कौन सी भावधारा है, जो कालातीत हो सब स्थानों में बहती है, जिसके अंतर्गत सास को पतोहू के प्रति ईर्ष्या और उसे हेठा बनाने की साजिश, भाभी के प्रति ननद की ईर्ष्या और तज्जन्य क्रियाकलाप सम्मिलित हैं। रामायण की परम्परा और शास्त्र भले ही नर रूपी नारायण राम, मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्श की रक्षा में सीता की उपेक्षा किया करें, पर लोकजीवन उन्हें क्षमा नहीं कर पाता। उसे सीता के प्रति अपार सहानुभूति है।

फलत: लक्ष्मण को तत्काल आज्ञा हुई उसे वन पहुंचा देने की। पुरुष का पौरुष यह स्वप्न में भी स्वीकार नहीं कर पाता कि उसकी पत्नी किसी अन्य पुरुष के बारे में सोचे भी! यहां तो वह उनका शत्रु ही था।

बुंदेलखण्ड का गीत इसी भाव को ननद भौजाई के माध्यम से व्यक्त करता है। ननद

मचले, रूठे. जिद्द ठान ले, तो भला भौजाई उसे क्यों न मनाए! इसी मनाने में अनर्थ हो गया। सीता पर टूट गया विपत्ति का पहाड़! कैकेई की एक बेटी थी ककुआ। आम नीम की शीतल छाया। उसके तले बैठी ककुआ और सीता। बात पर बात। आ गई रावण की बात-

आम अमलिया की नन्हीं-नन्हीं पत्तियां
निबिया की शीतल छांह
वहि तरे बैठि ननद भौजाई
चालें लागी रावण की बात!

कौन जानता था कि बात का बतंगड़ हो जाएगा! मचल गई ननद कि रावण का चित्र उरेह कर दिखा दो। रावण का नाम सुनकर भय की लहर उसके पूरे शरीर में फैल गई। विकृत हो गया चेहरा। वह तैयार तो हो गई, पर एक शर्त के साथ- 'जो घर करो न लबार' (यदि घर में इसकी चर्चा न करो, यह हम-तुम तक ही सीमित रह जाए), परन्तु कहां माना ननद ने ! गीत की पंक्तियां इस प्रकार हैं-

तुम्हरे देश भौजी रावन बनत हैं
रावन उरेह दिखाव
तो मैं एतना उरेहों बारी ननदी
जो घर करो न लबार.....।

चित्र बना दिया सीता ने स्मृति रूप-विधान के आधार पर परन्तु चित्र देखकर इतनी भयभीत हो गई कि मूर्छित हो चित्र पर ही गिर गई! ननद तो भौजाई की दुर्गति कराने की ताक में रहती है-आजीवन वैर का अप्रतिम उदाहरण। इधर सीता मूर्छित और उधर ककुआ दौड़ी जाती है राम के पास। प्रात:काल का समय। कंधे पर अंगोछा, मुंह में नीम का दातुन लिए राम। उसकी विस्फोटक सूचना- 'देखो न भैया, भौजी अभी भी रावण के ध्यान में रहती है। उसका चित्र बनाकर उसका आलिंगन करती है!' दौड़े राम। देखा, चित्र पर पड़ी सीता को। दे दिया निर्वासन। कैसे करते बर्दाश्त राम इस घटना को! फिर ऐसे अवसर पर कहां से रहता विवेक, कर्तव्य-अकर्तव्य का बोध!

अवधी गीत में भी यही प्रसंग है। कुएं, पनघट तो बतरस के लिए जग जाहिर हैं। वहां का जल जितना मीठा होता है, बातचीत उससे कम सरस और मोहक नहीं होती। यहाँ कभी अप्रिय और दु:खद प्रसंग भी आ जाते हैं। ननद भौजाई पानी लाने गई। ननद ने पूछ लिया- 'जो रावण तुम्हें हरकर ले गया था, उसे खींचकर दिखा ओ।' सहम गई सीता और प्रकट कर दिया इसका परिणाम -'यदि रावण का चित्र खींचकर तुम्हें दिखाऊं, तो तुम्हारे भैया जो सुन पाएं, तो देश निकाला दे देंगे!' परन्तु उसे ननद के आग्रह के समक्ष झुकना ही पड़ा।

ननद भौजाई दूनों पानी गईं अरे पानी गईं।
भौजी जौन खन तुहैं हरि लेइ ग उरेहि दिखाब हूं।
सुनि पैहें वीरन तुम्हार त देसवा निकरि है।

शास्त्र, तर्क जो भी कहें, लोकजीवन की अपनी दिशा है, सोचने का अपना ढंग है। वह यह स्वीकार ही नहीं कर पाता कि जंगल में अपने हाथों फूलों से सीता का शृंगार करने वाले राम, सीता वियोग में लता-वितानों, पशु-पक्षियों से करुण कातर होकर 'हे खग मृग है मधुकर श्रेणी, तुम देवी सीता मृगनैनी' पूछने वाले राम, सीता के हरणकर्ता के प्रति आग उगलने वाले (काल फणि की मणि पर जिसने फैलाया है अपना हाथ, उसी अभागे का दुख समझो लक्ष्मण से बोले रघुनाथ- (प्रदक्षिणा: गुप्त) वह राम इतना कठोर कैसे हो जाएगा कि एक अदनी-सी बात पर सीता का निष्कासन करेगा!

इसीलिए उसने दूसरे कारण की तलाश की, जिसमें अधिकांश लोकगीतों में मतैक्य है। कहीं-कहीं ऐसा भाव भी मिला है कि सीता साफ-साफ इनकार कर देती है। कारण, उसने कभी रावण को देखा ही नहीं, तो फिर चित्र कैसे बनाए, परन्तु दुराग्रह के आगे उसे झुकना पड़ता है और कभी परछाई में दिखे रावण का चित्र वह स्मृति के सहारे उकेरती है।

लोकजीवन को सीता के प्रति अत्यधिक लगाव है और राम के इस कृत्य के प्रति आक्रोश भी। पता नहीं वह कौन सी भावधारा है, जो कालातीत हो सब स्थानों में बहती है, जिसके अंतर्गत सास को पतोहू के प्रति ईर्ष्या और उसे हेठा बनाने की साजिश, भाभी के प्रति ननद की ईर्ष्या और तज्जन्य क्रियाकलाप सम्मिलित हैं।

रामायण की परम्परा और शास्त्र भले ही नर रूपी नारायण राम, मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्श की रक्षा में सीता की उपेक्षा किया करें, पर लोकजीवन उन्हें क्षमा नहीं कर पाता। उसे सीता के प्रति अपार सहानुभूति है। सच पूछिए, तो भारतवर्ष के लोकगीतों में सीता के विवाह, लवकुश काण्ड, उसके निर्वासन, वनगमन आदि का जिस अधिकता से उल्लेख हुआ है, वैसा राम के रामत्व के जयघोष का नहीं। लोकगीतों के अजस्त्र प्रवाह का अंकन सम्भव भी नहीं।

स्मृतियों के शिखर (187) : डॉ. महेन्द्र भानावत

चौमासे में बरसालू बादल की चिंतारणा

भारत देश ऋतुओं का रंगरसिया है। रसवंता रंगरेज है। यहां कोई बे-रंग नहीं है। रंग भी एक नहीं, अनेकानेक हैं। हर अच्छे काम पर यहां रंग देने की खुशहाल परिपाटी रही है। यहां सब रंगीला राजा और रंगीली रानी हैं। ऋतुएं यहां छहों बारी-बारी से रमण करतीं, रंभातीं, रमाकझमाक करतीं छविमान होती हैं।

इन ऋतुओं में वर्षा ऋतु सर्वोपरि सुरंगी ऋतु मानी गई है। कुदरत की क्रोड़ में पलनेवाले यहां के लोकजीवन ने अपने साथ प्रकृति को भी सदैव एक-सी समानधर्मा भूमि पर नापा है और उसके समस्त कार्यकलापों में भी अपनी ही आत्माभिव्यक्ति को प्रदर्शित होते देखा है। इन्द्र, बादल और बरसात ही यहां के वे आधारभूत मूल उत्स हैं जिनसे लोकजीवन को जीवनदायिनी शक्तियां प्राप्त होती हैं। इसलिए बरसात को वह सदैव अपने जीवन और मरण के रूप में देखा करता है। उसके आवश्यकतानुसार बरसने को वह अपने जीवन की सबसे बड़ी खुशहाली मानता है। यही कारण है कि भाग के भरोसे भगवान के प्रति पूर्ण आस्थावान बन यहां का संपूर्ण लोक इन्द्र, बादल और बरसात की नाना परिकल्पनाओं में अभिभूत हुआ दिखाई देता है।

वर्षा आने के कोई आसार नहीं दिखाई देने पर यह लोक नाना तौरतरीकों, जादूटोनों तथा शकुनों की शरण पकड़ता है। आसाढ़ लगते ही बालिकाएं अपनी-अपनी गुड़ियाएं छिपा देती हैं और बरसात के पूरे चार महिनों तक इनका मुंह तक नहीं देखती हैं कारण कि बरसात के लिए ये गुड़ियाएं अपशकुन की प्रतीक समझी जाती हैं।

ऐसे में यहां का लोकमानव नानाप्रकार के शकुनों की शरण पकड़ता है। पानी से भरी साफ लुटिया को पंसेरी पर रखकर उसके चारों ओर गोबर लगा दिया जाता है। यदि गोबर की सहायता से लुटिया पंसेरी से चिपक जाती है तो समझ लिया जाता है कि शीघ्र ही बरसात आने वाली है। कुकड़ी के कच्चे तारों में आटे के बने जलते दीपक को रखकर भी बरसात आने के शकुन लिये जाते हैं। यदि दीपक मन में सोची दिशा की ओर झूला खाने लगता है तो वर्षा आने के आसार समझ लिये जाते हैं।

कहीं-कहीं गोबर-पीली की गोहली पर धूप रख दी जाती है और उसके पास ही खांकले की कपड़ा लपेटी पतली-पतली टहनियां रख दी जाती हैं जो संख्या में सात के करीब होती हैं। इन टहनियों में से किसी को कोई एक टहनी उठाने के लिए कह दिया जाता। यदि मन में धारी हुई टहनी उठाली जाती है तो वर्षा आने के शकुन पक्के समझ लिये जाते हैं।

वर्षा नहीं आने की स्थिति में राज्य की ओर से रेड़ पड़ने पर गांव बाहर रसोई करने की परंपरा भी अत्यंत बलवती रही है। सामंतीकाल में राजा-महाराजाओं की ओर से गांव-बलाई रात्रि को महलों पर चढ़कर रेड़ के रूप में प्रात: गांव बाहर भोजन बनाने की आवाज लगाता। उसकी रेड़ सुनते ही दूसरे दिन सभी लोग सामूहिक रूप से बाग-बगीचे, छतरियां, महासतियां, ताल-तलैया, मन्दिर तथा गोपीरा जैसे स्थानों पर जाकर दाल-बाटी की गोठ करते।

राज्य की ओर से इस दिन गांव के आसपास के मामादेव, खेड़ादेव, गोबर्‌यादेव तथा हनुमान आदि देवों की पूजा कराई जाती। पूजा करने के लिए ढोल बजाता हुआ ढोली, बांकिया बजाता हुआ बांकियादार तथा दो-एक चाकर चरवादार जाते। नोरता में मामादेव को पाड़े की बलि नहीं देने पर भी बरसात को रोक देते। इसलिए उनकी भी विशेष रूप से मान-मनावण की जाती।

हरदेव के कुकड़ी के तार लपेटी कड़ब की छोटी सी मचली चढ़ाई जाती। गोबर्‌यादेव आधे जमीन में गड़े हुए तथा आधे जमीन के बाहर निकले हुए होते। मुहल्लों के लोग भी अपने-अपने मुहल्लों में देवों का बड़ी श्रद्धापूर्वक पूजन-पाठन करते। जीमचूंटकर आते समय औरतें मईबाबा संबंधी गीत गाती हुई घर लौटतीं। इन गीतों में बीजुराणी से इन्द्र को भेजने का मधुर आग्रह, स्नेह निमंत्रण और मीठी भलावण के कई प्रसंग देखने को मिलते हैं। बीजुराणी और महिला से आपसी संवाद का ऐसा मनोहारी वर्णन अन्यत्र कहां मिलेगा। उदाहरणार्थ -

इन्दरजी ने मोकल ए म्हारी बीजुराणी देश में।
इन्दरजी तो गया रे गुजरात आवे जदी मेलूं ए थारा देश में।।
गाय दुवाडूं ओ म्हारा इन्दरराजा छालरी दूधां पकाऊंली खीर।
भैंस दुवाडूं ओ म्हारा इन्दरराजा बाखड़ी दूधां धुलाऊंली पांव।
लापी रंधाऊं ओ म्हारा इन्दरराजा सोलमी मांए लीलड़ियो नारेल।
झाली तो मेलूं ओ म्हारा इन्दरराजा जलभरी पापड़ तळूं ए पचास।।
चोखा रंधाडूं ओ म्हारा इन्दरराजा उजला मांए डलाऊं हरिया मूंग।
लोंग सुपारी डोडा एलची ओ म्हारा इन्दरराजा पाका तो पान पचास।
लाडू बंधादूं ओ म्हारा इन्दरराजा बाजणा मूठिया मावा मिसरी ने खांड।

अर्थात् - हे बीजुराणी! इन्दरराजा को मेरे देश में बरसने के लिए भेज। हे बाई! इन्द्र तो गुजरात गये हैं। आवें जब तुम्हारे देश में भेजूंगी। हे इन्द्रराजा! मैं तुम्हारे लिये गाय दुहाऊंगी और उसके दूध में खीर पकाऊंगी। बाखड़ी भैंस का दूध दुहाऊंगी और उसके दूध से तुम्हारे पांव पखारूंगी। तुम्हारे लिए कच्चा नारियल डलवाकर सोलमी लपसी बनवाऊंगी और पानी से जल की भरी हुई झाली और खाने को पचास तले हुए पापड़ रखूंगी। हरे मूंगों के उजले चावल रंधवाऊंगी। लोंग, सुपारी, डोडा और पान तथा मिश्री खांड के मूठिये लड्डू बनवाऊंगी। हे बीजुराणी! तू इन्द्र को मेरे देश में बरसने के लिए शीघ्र भेज।

इन्द्र के नहीं बरसने पर कहीं-कहीं गांवों में सवा महीने तक घर-आंगन नहीं लींपने का ढींढ़ोरा पिटवा दिया जाता है तथा कुम्हार के वहां जाकर उसके चाक का पूजन कर उसे उल्टा घुमाने का टोटका किया जाता है। मंदिर आदि धार्मिक स्थानों पर राम-कृष्ण की धुनों का अखंड कीर्तन एवं यज्ञ-जाप तथा रामदेवजी और तेजाजी की पूजा भी कराई जाती है।

नन्हीं-नन्हीं बालिकाएं इन्द्रराजा को राजी करने के लिए कवेलू पर गोबर की मेंडकी निकालती हैं और 'धोबो-धोबो धान भरावो' कहकर प्रत्येक घर मेंडकी का जुलूस फिराती हैं। गृह-लछमियां बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ डेड़क लाई बालिकाओं का स्वागत कर उस पर लोठा भर पानी डालती हैं और मुट्ठी-दो-मुटठी अनाज देकर उन्हें विदा करती हैं।

इधर छोटे-छोटे बच्चे अपने-अपने घरों से नंगधड़ंग हो निकल पड़ते हैं और एक जगह एकत्रित हो जोर-जोर से 'मेहबाबे' को धरती पर आने का निमंत्रण देते हुए कहते हैं-

मेहबाबा आजा। घी ने रोटी खाजा।
आयो बाबो परदेशी। खाली कोटा भरदेशी।
ढांकणी में ढोकलो। मेहबाबा मोकलो।

अर्थात् - वर्षादेव आओ। घी-रोटी खाओ। परदेशी बाबा आयेगा। खाली अन्न-भंडार भर देगा। ढक्कनी में ढोकला अर्थात् एक विशेष प्रकार का खाद्य पदार्थ रखा कि वर्षादेव की झड़ी लग गई।

किसान यहां का पूर्ण वर्षाजीवी रहा है। इसलिए उसका वर्षा के साथ केवल सौंदर्य-प्रेम का ही प्रेम संबंध नहीं है। वह उसे जीवन की सर्वोपरि आवश्यकता मानता है। मेह का प्रत्येक संकेत उसके जीवन को प्रभावित करता है। गांवों की सामूहिक जिंदगी बरसात के बिना चल नहीं सकती। बादल अक्सर धोखा दे जाते हैं। इन्द्र अक्सर कुपित हो जाता है फलत: अकाल पड़ता है और भाग्यवादी किसान उसके भरोसे अपने भाल पर हाथ रखे आकाश की ओर टकटकी लगाये उसे निहारा करता है। कब बादल आवे और फिर झिर-झिर मेह की वर्षा करे।

मेह का केवल पानी बरसाना उसके लिए कोई महत्व नहीं रखता परन्तु वह जानता है कि इस पानी के साथ उसका जीवन बरसता है। उससे पशुओं के लिए चारा, खाने के लिए धान्य और बच्चों के लिए दूध बरसता है। इन्द्र, बादल, बीजु, पुरवा, सूरया आदि में वह अपनी आत्मा का प्रकाश देखता है। इन सबके साथ उसकी गहरी आत्मीयता है। इन्हें वह अपने परिवार के प्राणी समझता है। धरती उसकी मां, आकाश उसका पिता, इन्द्र उसका राजा, बीजु उसकी रानी, पुरवा उसकी बहिन और सूरया उसका भाई है। ये सब मानवीय प्राणी हैं। इनका खान-पान, रहन-सहन, रंग-रूप, जीवन-व्यवहार, आहार-निद्रा आदि सब मानव सदृश हैं।

किसान-स्त्री इन्द्र को अपना अतिथि मानती है और उसके पलक पांवड़े बिछाती है। अतिथि सत्कार में कहती है- 'आज हमारे देश पर मेहर करो इन्द राजा। बरसो। जल्दी बरसो और खूब बरसो। मैं तुम्हें चंदन की चौकी पर बिठाऊंगी। पवित्र दूध से तुम्हारे पांव पखारूंगी। तुम्हारे लिए उजले भात और हरे मूंगों की धुली हुई दाल बनाऊंगी। तांबे की कटोरी में घी गरम करूंगी और पापड़ सेकूंगी। तुम्हारे पोढ़ने के लिए पचरंगा पलंग, झालरदार गलीचा और नरम-नरम बिछौना दूंगी। तुम भोजन करोगे तो मैं तुम्हारी अंगुलियां निरखूंगी और जब तुम चलोगे तो मैं तुम्हारी मधरी-मधरी चाल निहारूंगी।' पुरवा बहिन से वह कहती है-

छिनएक चालो पुरवा भांण।
मेहा री म्हारे लगरही चाव छिन एक चालो परवा भांण।
दोय घड़ी जे रलको देद्यूं तो ताली भर ज्याय आंगण मांय।।
दोय घड़ी जे रलको दूद्यूं तो बंधिया गाड़ा पीवै ठाण।।
दोय घड़ी जे रलको देद्यूं तो छिल-छिल भर ज्याय सरवर ताल।।
दोय घड़ी जे रलको देद्यूं तो बोदी दुनियां फिर जी ज्याय।।

बरसाती हवाएं उसकी जिंदगी का सुखद संदेशा हैं इसलिए वह पुरवा से कहती है- 'हे पुरवा बहिन! तुम धीरे-धीरे बहो। मुझे मेह की चाव लग रही है। पानी भरी बादली को यदि घड़ी-दो-घड़ी के लिए झोला दे दो तो मेरे आंगन की तलैया भर जाय। ठाण में बंधे बाछरू पानी पीकर अपनी प्यास बुझाने लग जाय। ताल-तलैया भर जाय और हताश दुनिया को संजीवनी प्राप्त हो जाय।'

सामूहिक वेदना, सामूहिक तृप्ति, सामूहिक खुशहाली, सामूहिक अभाव और समस्त चराचर को खुशहाल देखने का उत्कृष्ट उदाहरण इसके अलावा अन्यत्र कहां मिलेगा। गांव का यह लोकसमाज व्यक्तिहित में कतई विश्वास नही रखता। उसका समग्र व्यक्तिहित समष्टिहित का चिंतक रहा है। इसलिए वैयक्तिक रूप से कही हुई प्रत्येक बात भी उसके समष्टि-अर्थ की द्योतक मानी जाती है।

राजस्थानी लोकजीवन में बरसात की बड़ी जबर्दस्त महिमा रही है। बरसात है तो सब कुछ है। खाना-पीना, उठना-बैठना, हंसना-खेलना, ओढ़ना-पहिनना सब बरसात के पीछे है। एक पत्नी अपने पति से गहनों की मांग करती है। पति उत्तर में कहता है-

'प्रिये! गहनों के लिए तुम इतनी क्यों बिलख रही हो? यह सारी धरती मेह के बिना तरस रही है और तुम्हें अपने गहनों की लगी है। धरती पर छककर बरसात होने दो, तुम्हारा सारा देह गहनों से लाद दूंगा। तुम्हारे सिर के लिए मैमद, रखड़ी, सिणगार पट्टी, पान, पटिया, झेला, झूटणा ; नाक के लिए नथ, चूंप, फीणी, भलका, भमरक्या ; कान के लिए टोटी, टोप्स, लूंग, झूमका, झेला ; गले के लिए बजंटी-मांदलिया, हालरी, टेवटो ; हाथ के लिए कांकण, कातर्‌या, चूड़ियां, पाटला, खांच, खंजरी ; कमर के लिए कंदोरा, चटका तथा पांव के लिए टणका, आमला, आइलां, पाइंला, तोड़ा, लंगर जैसे अनेकानेक आभूषण बनवाऊंगा। बरसात है तो गहने हैं, बाजूबंद है, सालू है, हाथीदांत का चूड़ला है, मखमल की जूतियां, ओढ़ना-बिछोना सब कुछ है और बरसात नहीं तो कुछ भी नहीं।'

बाट निहारते-निहारते अंत में बरसात आती है। धराऊ धुंधली दिखाई पड़ती है। प्रकृति का प्रत्येक अंग-प्रत्यंग नवयौवन और उन्माद लिए थिरक उठता है।

'सावन की डोकरियां' गुलाबी फूलों की तरह खिल उठती हैं। 'रामजी के घोड़े' शशक सी छलांगें भरते फूले नहीं समाते हैं। 'गिरगिलों' के ढेर-के-ढेर एक-दूसरे के गले मिलने को उमड़ पड़ते हैं। सीपी अपना मुंह खोल देती है। मेढ़क अपनी टर्र-टर्र और तीतर अपनी टी-टी-टी में सुधबुध खो बैठता है। 'टन्या' की स्यांस्यूं और गूंदिया की गोल लपेटें देखते ही बनती हैं। जुगनू अपने में प्रकाश के लिए धरती का हर कोना छानते नहीं थकते हैं। हरे सुनहले चटकीले नीले पंखों में मोर का नृत्य-निमंत्रण मईबाबे को इन्द्रधनुषी धरती पर मोह लेता है। तुरई, कुम्हड़े तथा चमेली के फूल अपनी महक से गगनबोर हो उठते हैं।

लो, झिरमिर-झिरमिर मेह बरस रहा है। बादल गरज रहे हैं। बिजली कड़क रही है और बरसात की झड़ी लग रही है-

झिरमिर-झिरमिर मेहुड़ौ बरसै बादलियो घररावै।।
जेठजी म्हांरा बूजा काटै परण्यो हलियो बाबै।।
देवर म्हांरा करे अलसोटी जेठांणी रोटी लावै।।
भतीजो म्हांरो रेवड़ चरावै नणदल गायां घेरै।।
ग्वालां ने म्हांरे गलछट चूरमो खीर लपसी हालियां खावै।

इस बरसते मेह और गरजते बादल में जेठजी कंटीली झाड़ियां काट रहे हैं। पति हल चला रहे हैं। देवर खेत साफ कर रहा है। जेठाणी सबके लिए रोटियां ला रही है। भतीजा रेवड़ चरा रहा है। नणदल गायें घेर रही है। बरसात की इस खुशी में मैं ग्वालों को चूरमा तथा हालियों को खीर जीमाऊंगी।

गावों की यह जिंदगी कितनी मोहक, मादक और मस्तीभरी है। बरसात आते ही लोकधर्म सभी ओर प्रवृत्त हो उठता है और ऐसे में अनंत आनंद, सुख और उल्लास की शतश: धाराएं फूट पड़ती हैं।

बरसात के दिनों में मानवजीवन के, मुख्यत: दाम्पत्यजीवन के, रागात्मक संबंध भी सहज रूप में उद्दीप्त हो उठते हैं। काली कलायण, कांठल, बादल, बिजली, पपीहा, मोर, कोयल आदि बरसात के विविध उपमान जहां एक ओर पति को अपनी प्रिया की याद में विकल बना देते हैं वहां दूसरी ओर प्रिय को भी अपनी प्रिया के विरह में आकुलित कर देते हैं। दाम्पत्य प्रेमभाव की यह स्वाभाविक व्यंजना

नाना उद्वेगों में उमड़ती हुई एक-दूसरे को बेचैन कर देती है। तीज रमने के बहाने पत्नी अपने पीहर में पति को बुलाने की पाती लिख भेजती है- 'मेरे मीठे मारू! साले तथा सालियां तुम्हारी बाट जो रहे हैं। सासु-सुसरा तुम्हारी 'हरख' लगाये बैठे हैं। तीज खेलने के लिए जल्दी पधारो। तुम्हारे बिना रात बैरण सी लग रही है। मैं रातभर करवट बदलती रहती हूं और तुम्हारी ही छवि निहारा करती हूं।'

पत्र-पर-पत्र और उत्तर-पर-उत्तर का तांता चलता रहता है मगर पति आता नहीं है। वह लिखता है- 'नणद-भोजाई, देराणी-जेठाणी तथा सास-बहू साथ-साथ सोओ। हिवड़े की बात करो और बैरण रात काटो।' इस पर वह लिखती है- 'नणद को नणदोई ले गये हैं।

- शेष पृष्ठ सात पर

शब्द रंजन

उदयपुर, सोमवार 15 जुलाई 2024

सम्पादकीय

हमारे रचनाकार

रचनाकार किसी भी भाषा के हों, उसके तीन वर्ग किये जा सकते हैं- नवोदित, स्थापित एवं सम्मानित। समस्याएं तीनों ही वर्ग के रचनाकारों की हैं। तीनों ही रचनाकारों के जब गुट बने नजर आते हैं तब समस्या और बढ़ जाती है।

नवोदित रचनाकारों को तो प्रारम्भ में किसी गुट का पता ही नहीं चलता। वे अपनी रचनाएं लिखते हैं तो उनके लिए समस्या पैदा हो जाती है कि वे किसको बताएं और कहां भेजें ताकि उनका ठीक मूल्यांकन हो सके और किसी पत्र-पत्रिका में स्थान पा सके। पत्र-पत्रिका का भी अपना दायरा होता है। उनमें अधिकांश स्थापितों को ही जगह मिलती है। वहां भी नवोदित रचनाकारों को जगह नहीं मिलती। कुछेक रचनाकार तो ऐसी स्थिति में निराश होकर लिखना ही बन्द कर देते हैं। कुछ रचनाकार कुछेक लिखकर निराश हो जाते हैं। जो पत्र-पत्रिकाएं छप रही हैं उनके अपने निजी संदर्भ होते हैं इसलिए कभी-कभी अस्तरीय रचना भी उनमें छप जाती है जबकि नवोदितों की अच्छी रचनायें भी पड़ी रह जाती हैं।

स्थापित रचनाकार 30 से 60 की उम्र लिये होते हैं। ये रचनाकार लिखते, छपते अपना संपर्क बना लेते हैं और यदि कुछ नहीं बना पाते हैं तो वे छटपटाते रहते हैं। उनके लिए जो छपते हैं, उनका एक गुट होता है। यह भी कि कैसी भी स्थिति में उनके पास अपनी रचना-पुस्तक छपाई का पैसा इकट्ठा हो जाता है इसलिए वे अपना निजी प्रकाशन खोलकर अथवा किसी प्रकाशक को पैसे देकर अपनी पुस्तक छपा लेते हैं।

60 से आगे की उम्र के रचनाकार परिपक्व आयु के होते हैं। ये रचनाकार सम्मानित होते हैं और चर्चित भी होते हैं लेकिन स्वाभिमानी बन जाते हैं। इनमें से कुछ ऐसे होते हैं जो निरन्तर सम्मान प्राप्ति के लिए लालायित होते रहते हैं। कुछ जिन्हें वांछित सम्मान नहीं मिलता वे अकड़ू स्वभाव के हो जाते हैं। कुछ उम्र शुदा स्थापित होकर भी सम्मानित नहीं हो पाते हैं।

सम्मान के भी दो रूप हैं। एक रूप तो वह जहां रचनाकार को शॉल, श्रीफल, दुपट्टा आदि से नवाजा जाता है। इनके साथ कोई राशि नहीं होती। राशि वाले रचनाकार अधिक नहीं होते।

ऐसे रचनाकार भी होते हैं जिनकी पुस्तकें पाठ्यक्रम का हिस्सा बनती हैं किंतु तब भी उनमें यह छटपटाहट बनी रहती है कि उन्हें कोई नहीं जानता। पाठ्यक्रम के हिस्से बने रचनाकार छात्रों में लोकप्रिय होते हैं।

किन्तु कई बार छात्र कुंजियों से अपना काम निकाल लेते हैं। वे रचनाकारों को अधिक नहीं जान पाते हैं। यह भी कि पाठ्यक्रम वाला रचनाकार जब तक पाठ्यक्रम में होता है तब तक कुछ चर्चित हो जाता है। स्थायी रूप से जिन स्थापित रचनाकारों में चर्चित नहीं होता है। गुटबाजी के कारण भी समीक्षक उसकी चर्चा नहीं कर पाते हैं। समस्याएं और भी कई हैं।

अनोखा खेल 'घोटा दड़ी'

- दिनेश सेठी -

वैसे तो मकर संक्रांति के दिन कई तरह के खेल खेले जाते हैं। ज्यादातर स्थानों में पतंगें उड़ाने का बहुत रिवाज है, जयपुर में तो यह इतने जोर-शोर से उड़ाई जाती हैं कि जयपुरवासी इस दिन अपने दूर के मित्रों व रिश्तेदारों को अपने पास जयपुर में आने के लिये निमन्त्रित करते हैं। इसके लिये उत्साह भी बहुत बना रहता है। बहुत दिनों पूर्व से इस दिन की प्रतीक्षा होनी शुरू हो जाती है। इस दिन के पूर्व ही पतंग उड़ाने में दिलचस्पी रखने वाले पतंगें खरीदना शुरू कर देते हैं तथा मांजा व सदा (पतंग उड़ाने की डोर) खरीद लेते हैं। कोई-कोई तो अपने हिसाब से स्वयं मांजा रंगते हैं।

इस दिन राजस्थान के बहुत से गांवों में एक खेल खेला जाता है जो कि 'घोटा-दड़ी' कहलाता है। यह खेल अपने तरह का एक निराला खेल होता है। यह हमारे वर्तमान के हॉकी एवं फुटबाल का एक मिलाजुला रूप होता है। इस खेल के लिए गांवों में बहुत पहले से ही तैयारी होनी शुरू हो जाती है। तैयारी के लिये कोई मैदान बनाने की आवश्यकता नहीं होती वरन आवश्यकता होती है सिर्फ एक गेंद की।

यह गेंद कपड़े की बनी हुई होती है। इसको बनाने के लिये छोटे-छोटे कपड़े के चीथरे (टुकड़े) इकट्ठे किये जाते हैं। इन सब कपड़ों को एक साथ इकट्ठा करके उन्हें गेंद का आकार देकर उनकी सिलाई की जाती है। जब चीथरों से बनी गेंद पूरी तरह से गोल हो जाती है तो उस पर कपड़े के ही खोल चढ़ाये जाते हैं। वे खोल एक या दो न होकर बहुत से होते हैं। प्रत्येक खोल को चढ़ाकर उसे गेंद के साथ सिल दिया जाता है। इस तरह यह खोल गेंद का ही एक हिस्सा हो जाता है और अलग नहीं हो सकता। ये खोल काफी मात्रा में इसलिये चढ़ाये जाते हैं ताकि यदि खेल के दौरान ऊपर की एक खोल फट जाय तो दूसरा खोल स्वत: ही आ जाये और गेंद को बराबर ठीक करने की आवश्यकता नहीं पड़े।

गेंद जब इतनी भारी एवं बड़ी है तो उसे खेलने के लिए भी वैसे ही साधन चाहियें। इसके लिए मोटी लकड़ियां इकट्ठी की जाती हैं जो कि इतनी मोटी ही होती हैं कि आसानी से हाथों में पकड़ी जा सके किन्तु इतनी पतली भी नहीं कि शीघ्र ही दो-चार बार झटके खाने से ही टूट जाय। वैसे खेलने वाले स्वयं इस लट्ठ (गेड़िया) का इन्तजाम करके लाते हैं।

साल में केवल एक दिन ही यह खेल खेला जाता है और वह भी सिर्फ मकर संक्रांति के दिन ही। इस खेल में केवल नवयुवक ही अक्सर हिस्सा लेते हैं। खेलने के लिये कितने खिलाड़ी हों इसकी कोई निश्चित संख्या नहीं होती। साधारणतया यह संख्या एक टोली में पन्द्रह से पच्चीस खिलाड़ियों तक की होती है। खेल में दो टोलियां हिस्सा लेती हैं। खेलने का मैदान गांव का मैदान ही होता है एवं गोल के लिये एक रेखा गांव के एक छोर पर व दूसरी रेखा गांव के दूसरे छोर, किनारे पर बना दी जाती है। खेलने वालों को गोल करने के लिये इन सीमाओं से बाहर गेंद को निकालना होता है। यह गोल रेखा गेंद रखी होने के करीब आधा मील दूर होती है। इस प्रकार पूरा मैदान करीब एक मील का हो जाता है।

सामान्यत: जब गांववासी सुबह का खाना खाकर कुछ आराम कर चुके होते हैं उसके पश्चात यह खेल शुरू किया जाता है। यह समय लगभग दिन के बारह बजे का होता है। इस समय गेंद को गांव के बीचों बीच रख दिया जाता है। दोनों ही टोलियों के खिलाड़ी अपने लट्ठ लेकर आ चुके होते हैं। खेलने के लिये कोई नियम नहीं होते एवं न ही किसी निर्णायक की ही जरुरत होती है। हां यह केवल पैरों या लट्ठ से ही खेल सकते हैं। दोनों ही टीमों के खिलाड़ी गेंद के दोनों ओर खड़े हो जाते हैं।

फिर गांव का मुखिया इशारा करता है और खेल शुरू हो जाता है। खेल शुरू होते ही दोनों पक्ष गेंद पर लट्ठ लेकर टूट पड़ते हैं और प्रतिपक्ष की गोल लाइन की तरफ गेंद बढ़ाना शुरू कर देते हैं। एक तो गेंद वैसे ही बड़ी भारी होती है अत: यदि गेंद पर भरपूर शक्ति से भी धक्का दिया जाये तो भी वह चार-पांच फुट से आगे नहीं बढ़ती फिर प्रतिपक्ष वाले भी कमजोर नहीं होते। वे भी गेंद को दूसरी ओर बढ़ाने में जी जान से लग जाते हैं। इन तरह दिन भर गेंद इधर-उधर उछलता रहता है। गांव के बच्चे बूढ़े एवं औरतें यह सब तमाशा देखते रहते हैं। गेंद को लकड़ी से या पांव से आगे बढ़ाया जाता है फिर लट्ठ छूट जाये या उस समय लट्ठ से गेंद बढ़ाने का मौका न हो तो पांव से ही गेंद बढ़ाई जाती है।

दिनभर बड़ी धमाचौकड़ी मचती है, धूल उड़ती है। दोनों ही पक्ष गोल करने में असमर्थ ही रहते हैं क्योंकि एक तो गोल रेखा ही बहुत दूर होती है व दूसरे थोड़ी सी गेंद आगे बढ़ाते ही विपक्ष वाले भी उसे धकेलने लगते हैं। यह फुटबाल की तरह हल्की तो है नहीं कि कोई भी अकेला व्यक्ति गेंद आगे बढ़ाकर ले जाये और गोल करदे। साधारणतया गांव में ही गेंद इधर-उधर घूमती रहती है। गांव की औरतें बड़े चाव से इस खेल को देखती हैं। इस खेल में पांव भी बहुत टूटते हैं क्योंकि लट्ठ से जब गेंद को मारा जाता है तो कई बार निशाना गेंद पर न लगकर किसी की टांग पर लग जाता है किन्तु खेलने वाले इसकी कोई परवाह नहीं करते, वे मग्न होकर खेलते रहते हैं।

शाम को जब सभी खिलाड़ी थककर चूर हो जाते हैं और अंधेरा होने लगता है तो गांव का मुखिया दोनों पक्षों को खेल रोकने को कहता है और उनको शाबासी देकर घर वापिस भेज दिया जाता है। उस समय तक गेंद आधी रह जाती है।

इस खेल का अंत अक्सर बिना निर्णय के ही होता है और दोनों ही पक्ष घर जाकर हाथ-पाँवों पर मालिश करवाते हैं व चैन की नींद सोते हैं। किसी-किसी के जब ज्यादा लग जाती है तो उसे खेल में से ही बाहर कर दिया जाता है और उसे चिकित्सा सहायता पहुंचायी जाती है।

साहित्यिक चौपाल और तीन तिकड़ी की यारबाजी

-डॉ. महेन्द्र भानावत-

ताश के पत्तों से मैंने दुकड़ी, तिकड़ी, चौकड़ी, छकड़ी और अठड़ी तक के खेल खेले हैं। बरसों हो गये, अब कोई प्रसंग हाथ नहीं लगा। छुट्टियों में दिनभर ताश ही कूटते। बिगड़ैल बच्चे पिटाई के साथ-साथ ताश से हो सत्यानाश जैसी गाली भी सुनते। ताशबाजी छूटी तो यारबाजी शुरू हुई। वह भी खूब रही। अब इस उम्र में जहां सुख के कई स्त्रोत सूख गये वहां अतीत में हुई यारबाजी की याद रस देती है पर मेरे जैसे व्यक्ति अब भी यारबाजी को प्रत्यक्षतः जीने के अधिक विश्वासी हैं हालांकि अब वैसे यारबाज मित्र भी नहीं रहे। नंदबाबू, प्रकाश आतुर, विश्वंभर व्यास, ओंकारश्री तो स्मृतिशेष ही होगये। सौ टका यारबाजी कमर मेवाड़ी की अब भी सबल बनी हुई है। वही रौनक, ताजगी और सदा बहार दिल्लगी।

उदयपुर में डॉ. पुरूषोत्तम छंगाणी, हरमन चौहान और मैं यदाकदा यारबाजी की चौपाल मांडते थे। छंगाणीजी आंखों की वजह से और हरमन घुटनों की वजह से पग बाहर नहीं करते पर मिलने की याद सताती सो 22 जून 2016 को टेंपो में बैठकर आ ही गये। अबरकी चौपाल छंगाणीजी के घर पर रखी थी सो मैं भी मधुबन स्थित उनके कुटुम्ब (कुटुम्ब अपार्टमेंट, फ्लैट नं. 301) में पहुंच गया। दो घण्टे कैसे बीते, पता ही नहीं चला। हमारे जलपान में छंगाणीजी का पूरा परिवार उल्लसित रहा। छंगाणीजी से मेरे जुड़ाव का प्रसंग यह रहा कि जब वे हिदुस्तान जिंक में राजभाषा अधिकारी बनकर आये तो जैसलमेर से दीनदयालजी ओझा ने मुझे लिखा कि पुरूषोत्तमजी वहां आ रहे हैं। वे मेरे जंवाई हैं। बाई और जंवाई आपके भरोसे है। ओझाजी के इस लेखन-कथन ने हम परिवारों को उसी भावभूमि से जोड़ रखा है तब हम एक ही पीढ़ी थे, आज तीसरी पीढ़ी चल रही है।

हरमनजी-छंगाणीजी बोम्बे में साथ थे। शायद इसीलिए छंगाणीजी ने उन्हें भी यहां अपने पास बुला लिया। दोनों हिन्दी-राजस्थानी के फक्कड़ लेखकों में अक्खड़ मिजाज लिए थे। छंगाणीजी में लोकचित्त ज्यादा रमा हुआ था। मैंने कई लेखों में उनकी जानकारी से अपने को समृद्ध किया। हरमनजी कवि के साथ कहानी, उपन्यास, संस्मरण, नाटक तथा व्यंग्य विधा में बड़ी दक्षता लिए रहे।

छंगाणीजी ने जिंक के कवि सम्मेलनों और अन्य आयोजनों में देश-प्रांत के अनेक ख्यातलब्ध हिंदी-राजस्थानी तथा उर्दू के रचनाकारों को आमंत्रित किया। अमृता प्रीतम, सेठ गोविददास, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', बालकवि बैरागी, नीरज, माया गोविद, हरिओम पंवार, काका हाथरसी, वीरेंद्र मिश्र, प्रभा ठाकुर, शैल चतुर्वेदी, निदा फाजली, हसरत जैपुरी, मोहम्मद सदीक, मधुप पांडे, सुरेन्द्र शर्मा, हरीश भादानी, मंगल सक्सेना, नंद चतुर्वेदी, प्रकाश आतुर, विश्वेश्वर शर्मा, भगवतीलाल व्यास, इकबाल सागर, आबिद अदीब, किशन दाधीच आदि अन्यानेक महारथियों का सान्निध्य प्राप्त करने का अवसर मुझे भी हाथ लगा।

इनमे से कइयों की उदयपुर के रसिक समाज के लिए अलग से सम्मान-गोष्ठियां तो भारतीय लोककला मण्डल में ही आयोजित की गई जिनका स्वागत-संयोजन करने का अवसर मुझे भी मिला।

कवि सम्मेलनों में छंगाणीजी की 'ऐसा कैसे हो जाता है?' कविता सर्वाधिक चर्चित रही। उसके कुछ छंद तो आज भी लोगों की जबान पर हैं। यथा-

ऐसा कैसे हो जाता है?
बादल यहां गरजते हैं,
बीजली वहां चमकती है
बरसात यहां होती है
और तालाब वहां भर जाता है।
मगर हम सूखे के सूखे
होठों पर प्यास का वितान बिछाये
सूखे गले से जल-बूंदों का गुणाभाग करते
कैसे रह जाते हैं?
ऐसा कैसे हो जाता है?

हम ऐसे अनेक स्मृतिरस से परिपूर्ण थाजों का माधुर्य-शहद लेते रहे। इसी बीच छंगाणीजी रंग में आ गए तो उन्होंने उधर के एक कवि खेमराज छंगाणी के काव्य-संस्मरणों से जो दिल्लगी प्रस्तुत की, हम उसी छोर को पकड़े रहे। छंगाणीजी ने बताया कि गांवों-कस्बों में भी ऐसे ठाठदार कवि हुए हैं जिनकी सुध नहीं ली गई। यदि उन्हें भी उचित मंच-वातावरण मिलता तो अग्रिम कवियों की पंक्ति में वे भी देला ही ठोकते।

खेमराजजी यों तो पोकरण के रहने वाले थे पर 56-60 के दौरान वे जैसलमेर में प्राइमरी स्कूल में अध्यापक रहे। तब जैसलमेर पर लिखी उनकी एक कविता ठेठ लोकचित्त में रंगी हुई दूर-सुदूर तक चर्चित रही। उन्हें यादकर हमें मालव कवि भावसार बा और राजस्थानी कवि माधव दरक की याद आ गई। खेमराजजी की काव्य-पंक्तियों का जायजा-जाजरिया पेश है-

आणा है न कोई जाणा है
जाणा जिसकोई जाणा है
ये अजब देश जैसाणा है।
संकड़ी गलियां डीगा घर है
गोरमेंट का गड़बड़ गाडा।
चाल रहा है आडा आडा
खावै सूर कूटिजै पाडा।

खेमराजजी हास्य के फव्वारे थे। जैसलमेर से उनका स्थानांतरण पोकरण हो गया तब वहां एक अध्यापिका नियुक्ति पत्र लेकर पहुंची। उसका नाम एस. एन. सिंह था पर वह महिला थी। पहलीबार पुरूषवाची नाम और उस महिला को देख खेमराजजी सकपका गये। विनोद से बोले- मैं ही मिला क्या, आप पुरूष होकर महिला वेश में आई हैं पर मैं आपके चक्कर में आने वाला नहीं हूं। लाख समझाने पर भी खेमराजजी नहीं समझ पाये। कभी नियुक्ति पत्र देखते, कभी उस महिला को और यही कहते, मेरे साथ मजाक कर रहे हो। आदमी हो और औरत वेश में आई हो। मैं भी कोई कच्ची गोली नहीं खेला हूं जो मूर्ख बन जाऊं।

महिला के लाख स्पष्टीकरण पर भी खेमराजजी नहीं माने। अंत में वे एसडीओ के पास गये। पहले तो नाम देख वे भी सकपका गये पर अंत में जब मूल प्रमाणपत्र देखे तो उन्हें विश्वास हो गया लेकिन खेमराजजी ने एसडीओ से कहा कि मैं अपने पर कोई रिस्क नहीं लेना चाहता। फिर इस पत्र में श्री को काट नहीं रखा है। इससे भी मेरा विश्वास पक्का हो रहा है कि यह नाम किसी पुरूष का ही है। ऐसी स्थिति में एसडीओ ने भी मौन धारण किये रखा। नतीजतन दूसरे दिन वह महिला जैसलमेर गई और नियुक्तिपत्र में सुधार कराकर लाई तब ही खेमराजजी ने उसे अपने वहां जोइन करने दिया।

यह घटना जिस-जिस ने भी सुनी उसे हंसी तो आई पर खेमराजजी को ही सच्ची प्रशंसा मिली और लोगों ने भी पहलीबार किसी महिला का ऐसा नाम सुना। खेमराजजी, छंगाणीजी, हरमनजी स्मृतिशेष हो गए मगर उनकी कविताएं और उनके रसिक मन को यादकर अनुरंजित होने वालों की संख्या कम नहीं है।

चातुर्मास के प्रमुख अनुष्ठान

-प्रमोदकुमार जोशी-

भारत प्राचीनकाल से ही धर्म प्रधान देश रहा है। धर्म की व्याख्या अत्यन्त विशद है। 'यतोऽभ्युदय: नि: श्रेयस: स: धर्म', जिससे सर्वविध कल्याण हो, उसे धर्म कहते हैं। महाभारत के अनुसार 'आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत'- आचार ही धर्म है। मनुस्मृति में श्रुत्युक्त आचार व धृति, क्षमा आदि दस लक्षणयुक्त आचार को धर्म कहा गया है। संक्षेप में-शुद्ध आचार-विचार द्वारा दैनिक क्रिया-कलापों में संलग्न हो, उच्च आदर्श की स्थापना करना ही वस्तुत: धर्म है।

भारतवर्ष में ईश्वर से सम्बन्धित विषय को धर्म या धार्मिक कहा जाता है, ऐसी परम्परा है। मनुष्य के हृदय में उस परम सत्ता के प्रति एक भय-सा बना रहा है। फलस्वरूप उसने अपने व परिवार के मांगल्य हेतु उसके विभिन्न रूपों, गतिविधियों एवं उत्सवों आदि का निकटता से अध्ययन कर उन्हें आत्मसात किया, जिसका श्रेय विशेषकर धर्मशास्त्रों को ही जाता है। इसके फलस्वरूप अनुष्ठान प्रचलन में आए, परन्तु इसके विपरीत कुछ अनुष्ठान स्थानीय लोक मान्यताओं एवं आस्थाओं के आधार पर भी प्रचलित होते गए, यद्यपि वे संख्या में अधिक नहीं हैं। अधिकतर लोक-अनुष्ठान शास्त्रोक्त होते हैं। केवल उनके मनाए जाने का ढंग परिवर्तित होता है। उसका विधान स्थानीय लोकभावना से अभिरंजित होता है। लोकहृदय की सहज अनुभूति उनमें विद्यमान होती है।

आषाढ़ शुक्ला एकादशी को विष्णु-शयनी एकादशी (महाएकादशी) नाम से भी जाना जाता है। इस दिन विष्णु भगवान क्षीरसागर में शयन करते हैं इसलिए इसे विष्णु-शयनी एकादशी भी कहा जाता है। पुराणों में यह भी वर्णित है कि विष्णु भगवान इस दिन से चार महीने तक पाताल में बलि के द्वार पर पहरा देते हैं।

एकादशी के दिन लोग चावल का परित्याग करते हैं ऐसी लोक परम्परा है जिसका अन्य बहुत से स्थानों की भांति हरिद्वार कनखल के धर्म-प्राण व्यक्ति विधिवत निर्वाह करते ना रहे हैं। इसके विपरीत जगदीशपुरी के लोग एकादशी को भी चावल खाते हैं। उनके अनुसार यहां जगदीश भगवान ने एकादशी को बांध रखा है, इसलिए चावल खाने का निषेध नहीं। इस व्रत के परिप्रेक्ष्य में दृढ़ प्रतिज्ञ रहने की शिक्षा एवं लोक-भावना निहित है। जिस प्रकार आज तक भगवान विष्णु अपने प्रण को निभाते आ रहे है, उसी प्रकार प्रत्येक प्राणी को प्रतिज्ञावान होना चाहिए।

श्रावण शुक्ला पंचमी को नाग पंचमी मनाई जाती है। राजस्थान व उत्तरप्रदेश के कुछ भागों की स्त्रियां इस दिन एक कहानी कहा करती हैं, जिसको मैंने कनखल क्षेत्र की नारियों के मुंह से भी सुना है-

'एक कृषक परिवार अपने परिवार सहित मणिपुर नामक नगर में रहता था। उसके दो पुत्र तथा एक पुत्री थी। कहा जाता है कि किसी दिन खेत जोतते समय उसके हल के अग्र भाग से किसी नागिन के तीन बच्चे मर गए। इस पर नागिन ने शोक करते हुए कृषक से बदला लेने का संकल्प किया। अस्तु, रात्रि के समय नागिन ने (पत्नी सहित) उस कृषक को व उसके दो लड़कों को डसा।

फलस्वरूप वे मर गए। दूसरे दिन उक्त सर्पिणी जब कृषक की कन्या को डसने गई तो वह भयातुर हो सर्पिणी के सम्मुख दूध रख कर प्रार्थना करने लगी। यद्यपि लड़की को विदित नहीं था तथापि वह नाग पंचमी का दिन था, जिससे नागिनी प्रसन्न हो गई और उसे वर मांगने को कहा। लड़की ने वर मांग कर अपने माता-पिता और भाइयों को जीवित करा लिया।' उसी दिन से इस नाग पंचमी के व्रत का प्रचार विशेष रूप से हुआ, जो शास्त्रीय होते हुए भी यत्र-तत्र लोक अनुष्ठान के रूप में भी प्रसिद्ध है।

हेमाद्रि के प्रभास खण्ड में लिखा है-

श्रावणे मासि पंचम्यां शुक्ल पक्षे तु पार्वति।
द्वारस्योभयतो लेख्या गोमयेन विपोल्वणा:।।
सा तु पुण्यतमा प्रोक्ता देवानामपि दुर्लभा।
कुर्याद द्वादशवर्षाणि पंचम्यां च वरानने।

उपरोक्त श्लोक के अनुसार ही आज की स्त्रियां इस अनुष्ठान की विधिवत प्रक्रिया निभाती हैं। स्त्रियां अपने-अपने घरों के द्वारों को गोबर, गौमूत्र आदि से लींप कर उनके दाएं बाएं पांच सर्पों की आकृतियां बनाती हैं। कुछ स्त्रियां देव स्थान पर ही मिट्टी द्वारा भी सर्प आकार बनाकर उसका पूजन करती देखी जाती हैं। सायंकाल फलाहार किया जाता है जिसमें हल द्वारा जुते हुए पदार्थ नहीं होते, ऐसी लोकपरम्परा प्रसिद्ध है।

नाग पंचमी व्रत के पीछे एक रहस्य छिपा है। प्राय: देखा यह जाता है कि दूब देने वाली गाय का पूजन सभी करते हैं, परन्तु इसके विपरीत जहर से व्याप्त सर्प का पूजन करने वाली उस आर्य जाति को हमें धन्यवाद देना चाहिए जिसने नाग पंचमी के इस व्रत की परिपाटी चलाई। इसी सिद्धांत को लक्ष्य मानकर श्रीकृष्ण ने भी कहा है कि- 'सम: शत्रौ च मित्रे च।'

'शत्र और मित्र में समान दृष्टि रखनी चाहिए।' प्रतीत होता है कि नाग पंचमी के इस व्रत का उद्देश्य कोरा धार्मिक ही न रहकर जन कल्याणमय है। इसमें समभाव की लोक-भावना विद्यमान है।

श्रावणी सोमवार : सावन के प्रत्येक सोमवार को प्रात: शिवपूजा करके उपवास रखने की लोकपरम्परा प्राय: प्रचलित है। कनखल क्षेत्र स्थित दक्षेश्वर महादेव का प्रसिद्ध मन्दिर है। शिव पत्नी 'सती' यहीं पर अपने पिता से रुष्ट होकर यज्ञ कुण्ड को सर्मापित हो गई थी।

उक्त मन्दिर के प्रांगण में विगत सैकड़ों वर्षों से सावन सोमवारों का मेला भरता है जो विशेषकर शहरी एवं ग्रामीण जनता में परस्पर सामजस्य एवं सौहार्द स्थापित करता है। तिज्जो (तीज) के पश्चात आने वाले सोमवार का मेला विशेषकर 'चौहान मेला' अथवा 'ग्रामीण मेला' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। इसमें विशेषकर कनखल क्षेत्र के समीप के गांव जगदीशपुर, पंजन हेड़ी, फेरुपुर, बोंगला, बहादराबाद, रोहालकी, अहमदपुर, अलीपुर, खेलड़ी, मीरपुर, औरंगाबाद, रावली महदूद आदि गांवों की जनता भाग लेती है।

प्रात: होते ही ग्रामीण अंचलों के नागरिक अपने-अपने ट्रैक्टर-बुग्गी व बैलगाड़ी आदि वाहनों में बैठकर मेले के लिए प्रस्थान करते हैं। सतरंगी परिधान पहने नारियों की टोलियां रास्ते भर सावन एवं देवी-देवता के गीतों से भरा वातावरण बनाती रहती हैं। ग्रामीणों का यह मेला तिज्जो के बाद आने वाले सोमवार को ही क्यों भरा जाता है?

इसका कारण यह है कि इस प्रकार की प्रथा आसपास के सभी गांव वालों के लिए संकेतार्थ बन चुकी है ताकि तिज्जो आते ही सभी को मेले का स्मरण हो जाए ।

इस मेले का दूसरा कारण यह भी था कि इस मेले में ग्रामीण क्षेत्रों के सभी युवक युवतियों के भी एकत्रित होने के कारण विवाह सम्बन्ध हेतु, माता-पिता द्वारा वर को कन्या व कन्या को वर सुविधानुसार दिखा दिए जाते थे। इस अवसर पर तिज्जों के कारण कन्याओं में मेंहदी, आलता एवं प्राकृतिक उल्लास आदि के कारण सौन्दर्य की विशेष उपस्थिति रहती है। अत: सौंदर्य प्रसाधन की आवश्यकता भी नहीं रहती। हालांकि आज के आधुनिक वातावरण में यह सब काफी परिवर्तित सा हो गया है फिर भी कुछ परिवारों में यह वर्तमान है जिस कारण यह मेला अभी भी उसी लोक-परम्परा के साथ निभाया जा रहा है।

धर्मशास्त्रों के अनुसार श्रावण ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण चतुर्मास दान, धर्म, तप के लिए प्रसिद्ध है। इतना ही नहीं नखों का छेदन, खाट पर शयन तथा भार्या-सेवन कदापि वर्जित है परन्तु आधुनिक समय में प्राय: यह देखा जाता है कि सावन का महीना, प्रेम-वासना का महीना हो गया है।

शास्त्रीय संगीत के मल्हार आदि रागों को शाब्दिक रचना भी प्रेम पिपासा की अभिवृद्धि करने वाली होती है। चलचित्रों के गीत 'अजहुं ना आये बालमा, सावन बीता जाए' तथा 'सावन का महीना, पवन करे शौर, जियरा रे झूमे ऐसे जैसे बनमां नाचे मोर' में प्रेमी मोर के समान मानव-मन भी प्रेमातुर हो प्रेम में विह्वल होता प्रतीत होता है। इसी संदर्भ में लोकगीतों का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि स्थानीय स्त्रियां भी सावन के गीत गाते हुए प्रेम सम्बन्धी अथवा सास-बहू के डाह सम्बन्धी गीत गाती हुई देखी जाती हैं। ऐसा ही एक गीत झूले आदि में स्त्रियों तथा लड़कियों के मुंह से सुना है जिसका भाव इस प्रकार है-

'कभी कोई सास अपनी बहू को भोजन में विष दे देती है। फलस्वरूप बहू मर जाती है। बारह वर्ष बाद बाहर से पति के घर आने पर मां द्वारा उसे ज्ञात होता है कि वह मर गई है। पश्चात मां उसे कहती है चन्दन की लकड़ी काटकर ला तथा उसे जाकर फूंक आ। फिर किसी दिन लड़के के सपनों में वह आकर अपने मरने का सारा वृतान्त सुनाती है।'

बड़े बगड़ में री सास्सु मछली बिकअ थी।
सब-सब ने तो ले लीरी सास्सु सेर दुसेरी।
तू क्यों लेवेरी सास्सु पूरी पन्सेरी।
और दिन तो रैअन दे सास्सु बगड़ बिचाल्लअ।
आज क्यों रैअन दे री सास्सु ओट के ओल्लह।
और दिन तो देवे री सास्सु सबसे ही बाद में।
आज क्यों देवे री सास्सु सबसे ही पहले।
और दिन तो देवे री सास्सु बेल्ले में।
रखा के पहला जो टुकड़ा री सास्सु कुत्ते कूं गेरा।
टुकड़े कूं खात्तो री सास्सु कुत्ता भी मरग्या।
दूजा जो टुकड़ा री सास्सु बिल्ली कूं गेरा।
टुकड़े कूं खात्तो री सास्सु बिल्ली भी मरम्मी।
तीज्जा जो टुकड़ा आप्पे ही खाया।
टुकड़े कूं खात्तो री सास्सु निद्रा ने घेरा।
जगह बताइये री सास्सु जगह बताइय्ये।
ऊंची अटारी लाल किवाड़ी वहीं पड़ सो सजनों की बेट्टी।
बारह बरस में री सास्सु राजा घर आये।
सब-सब तो दिखे री अम्मा वा ही ना दिख्खे।
ऊंची अटारी रे बेट्टा लाल किवाड़ी।
वहीं पड़ सोवे सजनों की बेट्टी।
पहली हांक मारी री धम्मा जब भी ना बोल्ली।
दूजी हाँक मारी अम्मा जब भी ना बोली।
तीजी हाँक मारी री अम्मा चद्दर उघाड़ी।
देख्खे तो क्या मरी पड़ी थी।
चंदन कटाइयो रे बेटा फूंक चला आइय्ये।

(इसके पश्चात रात्रि को सपने में लड़के को बहू अपने मरने का सारा वृतान्त सुनाती है।)

इस प्रकार लोक-भावना के अनुसार विदित होता है कि सावन का महीना प्रेमी-प्रेमिका की याद अथवा मिलन का है, जिसका लोकगीतों में प्रमुख स्थान है। उत्तरप्रदेश के बहुतेरे स्थानों की तरह यहाँ के अधिकांश परिवारों में प्रथा है कि तिज्जो के अवसर पर लड़की-दामाद का विशेष सम्मान व लेन-देन किया जाता है।

श्रावणी उपाकर्म व रक्षाबंधन प्राय: सभी प्रान्तों में प्रचलित है। लोक-प्रचलन के अनुसार श्रावणी-पर्व ब्राह्मणों का त्यौहार माना जाता है। श्रावणी के दिन लोग विशेषकर बाह्मण वर्ग, नदी अथवा तालाब में जाकर पंचगव्य-प्राशन तथा स्नान करके उपाकर्म की समाप्ति करते हैं।

इस दिन कनवत (हरिद्वार) के गंगा घाटों पर तो प्रात:काल ब्राह्मणों को सैकड़ों की संख्या में उपाकर्म करते देखा जाता है। प्राचीन लोकपरम्परा के अनुसार उपाकर्म के दिन से गुरु ग्रह में रहने वाले बह्मचारियों को पढ़ाने का कार्य प्रारम्भ करके माघ मास में समाप्ति के समय उत्सर्जन किया जाता था। वर्तमान लोकपरम्परा के अनुसार उपाकर्म करने के पश्चात ब्राह्मण अपने यजमानों को उनको दीर्घायु हेतु घरों में जाकर रक्षा बांधते हैं। तत्पश्चात यजमानों द्वारा उनको यथोचित दक्षिणा से सम्मानित किया जाता है।

रक्षाबंधन के दिन प्राय: बहनें भाइयों के राखी बांधती हैं। राखी का यह त्यौहार काफी प्राचीन है। मुगलकाल में रानी कर्णावती ने भी हुमायूँ के राखी बांधी थी। द्रोपदी ने भी श्रीकृष्ण के राखी बांधी थी। इस सम्बन्ध में यह धारणा भी अब लोक-प्रचलित है कि अपने रक्षार्थ बहनें भाई को राखी बांधती है। वास्तव में राखी की परम्परा 'स्मरण' कराने के भाव से जुड़ी हुई है। जब तक बहन की बांधी राखी भाई के हाथ में बंधी होगी तब तक भाई को बहन की रक्षा की स्मृति बनी रहेगी। मध्ययुग में आक्रमणकारी धन-दौलत, सम्पत्ति के साथ-साथ स्त्रियों पर भी हाथ रखते थे। इसी कारण प्रजा में राखी का अधिक प्रचलन हुआ होगा।

स्थानीय लोकपरम्परा के अनुसार सलूनो (रक्षाबंधन) के दिन प्राय: घरों में दरवाजों के इधर-उधर गेरू व चावल के घोल द्वारा राम-लक्ष्मण, भाई-बहन तथा श्रवणकुमार आदि शब्द लिखे जाते हैं। बहन, भाई को राखी बांधती है। आरती उतारती है। तिलक करती है। उसका मुंह मीठा करती है। दूसरी ओर भाई द्वारा बहन को यथाशक्ति रुपये आदि दिए जाते हैं। यह प्रथा प्राय: सभी जगह प्रचलित है तथा सर्व विदित है।

देव प्रबोधिनी एकादशी को अधिकांशत: इसको 'देव-उठोनो एकादशी' भी कहा जाता है तथा लोकभाषा में इसको ग्यारहवी तिथि के आशय से 'ग्यारस' अथवा 'ग्यास' नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। यह अनुष्ठान कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को किया जाता है। यह दिन परमात्मा (विष्णु) को उठाने का दिन है।

इस दिन स्त्रियां व्रत रखकर सायंकाल गोधूली बेला में जमीन पर गेरु, चावल अथवा आटे से चित्रकारी करती है। चित्र में देवता उसके साथ बच्चा, साट (चारपाई) तथा तखती आदि का चित्रण किया जाता है। इस क्षेत्र के गांवों में तो घर के जितने व्यक्ति हों उतने ही पैरों का चित्रण करना यहाँ की परम्परा है। वस्तुत: पैरों के चित्रण का भाव तैंतीस करोड़ देवताओं के चित्रण से है, परन्तु कालान्तर में यह प्रथा बिगड़कर परिवार के सदस्यों की पैरों की संख्या में परिणत हो गई है।

चित्रण किए हुए पूजास्थल पर (जमीन पर ही) बेर, सकरकन्दी, सिंघाड़ा, कपास, चने का साग, मूली, गन्ने की पोरी, चावल, खील-पताशे व मिठाई आदि रखे जाते हैं। दीपक विशेषकर घी का न होकर तेल का ही जलाया जाता है। पूजा में सर्वप्रथम गणेशजी का पूजन कर, विष्णु-नारायण का ध्यान किया जाता है। इसके पश्चात देवताओं को उठाया जाता है। इस कार्य में कांसे की थाली को गन्ने की पोरी रूपी डंडे से बजाकर भगवान को उठाया जाता है। साथ ही साथ बोलते हैं-

उठ नारायण, बैठ नारायण।
चल चने के खेत नारायण।
मैं बोऊं तू सींच नारायण।
मैं काटूं तू खोट नारायण।
मैं पीसूं तू समेट नारायण।
मैं पोऊँ तू खा नारायण।

इसके पश्चात सम्पूर्ण पूजा सामग्री (पूजापा) को अपने पुरोहित अथवा घी-बेटियों में वितरित कर दिया जाता है। स्थानीय परम्परा के अनुसार जिस कन्या या वर का विवाह कहीं भी सूझ न रहा हो, इस दिन बेरोकटोक उसका विवाह कर दिया जाता है। इसका कारण सम्भवत: यह है कि यह दिन तुलसी विवाहोत्सव के कारण शुभ माना जाता है। तुलसी-विष्णु विवाह की बड़ी प्राचीन परम्परा है। विवाह की सम्पूर्ण प्रचलित प्रथाएँ बारात, भोजन, दान दहेज सभी निभाई जाती हैं। लोक भावनानुसार तुलसी को विदा करते समय माँ-बेटी भाव से, स्त्रियों को रोते हुए भी देखा जाता है।

इस प्रकार यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि अपने धर्म व संस्कृति को काफी हद तक लोक-परम्पराओं व आस्थाओं ने जीवन्त किया हुया है। अनुष्ठानों के इस परम्परागत निर्वाह का श्रेय अनपढ़ ग्रामीण माताओं-बहनों को जाता है, जिनके लोक-अभिव्यक्तिकरण से परम्परागत विधा का एक अध्याय जुड़ा हुआ है।

बाजार / समाचार

मोटोरोला ने लॉन्च किया रेज़र 50 अल्ट्रा

उदयपुर (ह. सं.)। मोबाइल तकनीक और नवाचार में वैश्विक अग्रणी, मोटोरोला ने आज फोल्डेबल स्मार्टफोन तकनीक में एक बार फिर से बदलाव करते हुए अपने रेज़र फ्रेंचाइजी के सबसे उन्नत स्मार्टफोन, मोटोरोला रेज़र 50 अल्ट्रा को लॉन्च किया है। मोटोरोला इंडिया के मैनेजिंग डायरेक्टर टी.एम. नरसिंहन ने कहा कि यह फ्लिप फोन मोटोरोला की विकास और उत्कृष्टता की प्रतिबद्धता को दर्शाता है, जिसमें विभिन्न उद्योग अग्रणी विशेषताएँ जैसे कि किसी भी फ्लिप फोन की सबसे बड़ी, सबसे इंटेलीजेंट बाहरी डिस्प्ले शामिल हैं। मोटोरोला रेज़र 50 अल्ट्रा सिंगल 12 जीबी रैम और 512 जीबी स्टोरेज वेरिएंट में उपलब्ध होगा, और इसे 3 प्रभावशाली पैनटोन क्यूरेटेड रंगों में लॉन्च किया जाएगा – मिडनाइट ब्लू, स्प्रिंग ग्रीन, और वर्ष 2024 का रंग – पीच फज़। इस उत्पाद की बिक्री 20 जुलाई 2024 से शुरू होगी और पूर्व-आरक्षण 10 जुलाई से अमेज़न, रिलायंस डिजिटल, मोटोरोला डॉट इन और भारत में अग्रणी खुदरा स्टोर्स में उपलब्ध होगा। मोटोरोला रेज़र 50 अल्ट्रा (12 जीबी + 512 जीबी) लॉन्च कीमत- 99,999 रुपए, सीमित अवधि – अर्ली बर्ड कीमत : 94,999 रुपए एवं बैंक ऑफ़र सहित प्रभावी कीमत : 89,999 रुपए है।रेज़र 50 अल्ट्रा न केवल फोल्डेबल स्मार्टफोन के भविष्य को पुनर्निर्धारित करेगा, बल्कि हमारे प्रिय ग्राहकों की अपेक्षाओं को भी पूरा करेगा।

कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से 3.25 लाख युवा प्रशिक्षित हुए

उदयपुर (ह. सं.)। विश्व युवा कौशल दिवस पर, एचडीएफसी बैंक परिवर्तन ने अपने विभिन्न कौशल कार्यक्रमों के माध्यम से पूरे भारत में 325,000 से अधिक युवाओं को जोड़ा है। कौशल विकास और आजीविका संवर्धन बैंक के परिवर्तन कार्यक्रम का एक प्रमुख फोकस क्षेत्र है, जो सभी सीएसआर पहलों के लिए इसका अम्ब्रेला ब्रांड है। बैंक वर्तमान में विभिन्न राज्यों में कौशल विकास के क्षेत्र में 100 से अधिक परियोजनाओं पर काम कर रहा है, जिसमें आईटी/आईटीईएस, खुदरा, स्वास्थ्य सेवा, विनिर्माण और कृषि सहित कई क्षेत्र शामिल हैं।

एचडीएफसी बैंक सीएसआर प्रमुख नुसरत पठान ने कहा कि एचडीएफसी बैंक में हम मानते हैं कि हमारे युवाओं को सही कौशल के साथ सशक्त बनाना हमारे देश के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है। हमारे परिवर्तन प्रशिक्षण कार्यक्रम न केवल बाजार की मांगों से जुड़े व्यावसायिक कौशल प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं, बल्कि युवा दिमाग में आत्मविश्वास और महत्वाकांक्षा भी पैदा करते हैं। प्रतिष्ठित भागीदारों के साथ सहयोग करके और उच्च विकास क्षमता वाले क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करके, हम कौशल अंतर को पाटने और भविष्य के लिए एक मजबूत और समावेशी कार्यबल बनाने के लिए प्रतिबद्ध हैं। हमारा मिशन यह सुनिश्चित करना है कि हमारे द्वारा पहुँचे जाने वाले प्रत्येक युवा को भारत की गतिशील अर्थव्यवस्था में योगदान करने और आगे बढ़ने का अवसर मिले।

मोटो जी85 5जी स्मार्टफोन लॉन्च

उदयपुर (ह. सं.)। भारत के सर्वश्रेष्ठ 5त्न स्मार्टफोन ब्रांड, मोटोरोला ने आज मोटो जी85 5जी के लॉन्च की घोषणा की। यह मोटो जी सीरीज का पहला स्मार्टफोन है, जिसमें सबसे बेहतरीन 3डी कर्व्ड, एंडलेस एज डिस्प्ले लगाया गया है। मोटोरोला इंडिया के मैनेजिंग डायरेक्टर टी.एम. नरसिंहन ने कहा कि मोटो जी85 5जी को इस सेगमेंट में पहली बार कई उम्दा और बेहतरीन फीचर्स के साथ पेश किया गया है, जिनमें सेगमेंट के सर्वश्रेष्ठ 3डी कर्व्ड 120एचजेड वीओएलईडी डिस्प्ले के साथ गोरिल्ला ग्लास 5 प्रोटेक्शन और 1600 निट्स का ब्राइटनेस शामिल है। लोगों को हैरत में डाल देने वाले सोनी लिटिया 600 सेंसर के साथ सेगमेंट के सबसे शानदार शेक फ्री 50 एमपी ओआईएस कैमरे के साथ आने वाले इस स्मार्टफोन का डिजाइन काफी स्लीक, लाइटवेट और सुपर-प्रीमियम है, जिसे पैनटोन क्यूरेटेड कलर्स के अलावा बेहतरीन सॉफ्टवेयर अनुभव के लिए स्मार्ट कनेक्ट के साथ बाजार में उतारा गया है। इसके साथ ही, मोटो जी85 5जी में इस सेगमेंट का सबसे बेहतरीन 12जीबी रैम +256 जीबी स्टोरेज है और यह 13 5जी बैंड्स के साथ जबरदस्त 5जी परफॉरमेंस और इसी तरह के ढेर सारे फीचर्स को सपोर्ट करता है। इसकी कीमत 16,999 रुपये (8+128जीबी) और 18,999 रुपये (12+256 जीबी) है।

बदलते मौसम में हेयर एण्ड केयर ट्रिपल ब्लेंड, नॉन-स्टिकी हेयर ऑयल चुनने की सलाह

उदयपुर (ह. सं.)। मैरिको विशेषज्ञ डॉ. शिल्पा वोरा ने मानसून के दौरान बालों की सुरक्षा के लिये हेयर एण्ड केयर ट्रिपल ब्लेंड, नॉन-स्टिकी हेयर ऑयल चुनने की सलाह दी है। भारत में मौसम बदलने के साथ ही बालों पर भी असर पड़ता है। वातावरण में होने वाले बदलाव बालों को नुकसान पहुँचा सकते हैं। गर्मियों में धूप और उमस से बालों की संरचना कमजोर हो सकती है। सर्दियों में हवा की नमी कम रहती है और बाल रूखे होकर टूट सकते हैं। इसी तरह, मानसून के मौसम में ह्यूमिडिटी बढ़ जाती है और बार-बार बारिश के पानी में भीगने से बाल झड़ते हैं और उन्हें नुकसान होता है। इन सभी वजहों से अक्सर बाल फ्रिजी हो जाते हैं और स्कैल्प गंदा होने के साथ ही ऑयली होने लगता है।

मैरिको की मुख्य शोध एवं विकास अधिकारी डॉ. शिल्पा वोरा ने हेयर एण्ड केयर ट्रिपल ब्लेंड नॉन-स्टिकी हेयर ऑयल का इस्तेमाल करने की सलाह देते हुए कहा कि बालों में नियमित रूप से तेल लगाने से उन्हें जरूरी पोषक-तत्व मिलते हैं जिससे बालों को सेहतमंद बनाए रखने में मदद मिलती है। बाल तेल को सोख लेते हैं और यह तेल सर्फेस डैमेज में सुधार करता है। इससे बालों की ताकत बढ़ेगी, उनकी नमी नहीं जाएगी और वे रूखेपन का शिकार नहीं होंगे। तेल से बालों के फ्रिजी होने से बचने में भी मदद मिलती है और उन्हें संभालना आसान हो जाता है। तेल में मौजूद ल्युब्रिकेंट के गुणों से बालों को सुलझाना आसान हो जाता है और ब्रश या कंघा करते वक्त उन्हें नुकसान नहीं होता है।

स्टर्लिंग हॉलीडे रेसोर्ट्स के उदयपुर में तीसरे रेसोर्ट का उद्घाटन

उदयपुर (ह. सं.)। भारत के अग्रणी लैज़र हॉस्पीटेलिटी ब्रैंड स्टर्लिंग हॉलीडे रेसोर्ट्स ने राजस्थान में स्टर्लिंग अरावली उदयपुर के खुलने की घोषणा की है। इसके साथ ही, यह राज्य में स्टर्लिंग का छठा और उदयपुर में तीसरा रेसोर्ट है। लगभग 2.5 एकड़ लैंडस्केप्ड आउटडोर की सुविधा वाले इस रेसोर्ट से अरावली की पहाड़ियों का खूबसूरत नज़ारा दिखायी देता है।

40,000 वर्गफुट में फैले ग्रीन लॉन्स ओर मल्टीपल बैंक्वेट हॉल हैं जिनमें करीब 5000 मेहमानों की क्षमता है। रेसोर्ट में लाइव स्ट्रीमिंग, मेहमानों के लिए रोचक गेम्स और एक्टिविटीज़, क्युरेटेड थीम के मुताबिक साज-सज्जा, ग्रैंड मैन्यू और वैडिंग मैनेजर आपकी जरूरतों के हिसाब से प्लानिंग और विवाह समारोहों के आयोजन में मददगार साबित होते हैं।

स्टर्लिंग अरावली उदयपुर, अद्भुत हवेली आर्किटेक्चर से प्रेरित है रेसोर्ट में 67 बड़े कमरे और सुइट्स हैं जिनमें क्लासिक रूम, हवेली रूम, प्रीमियर रूम विद पूल व्यू, अरावली हिल्स व्यू वाले प्रिविलिज स्वीट्स तथा चार बेडरूम वाली हवेली सुइट शामिल हैं, जो इस क्षेत्र की विंटेज आर्किटैक्चरल शैली को प्रमुखता से उभारते हैं। रेसोर्ट के फाइन डाइनिंग वेजीटेरियन रेस्टॉरेंट 'ऐरावत' में राजस्थानी व्यंजनों के अलावा कई पसंदीदा लोकप्रिय ग्लोबल व्यंजनों को भी परोसा जाता है। रेसोर्ट के सेंटर कोर्टयार्ड में एक स्वीमिंग पूल और जल्द ही, रेसोर्ट में मेहमानों के रिलेक्सेशन तथा एंटरटेनमेंट के लिए सिग्नेचर स्पा एवं लाउन्ज बार भी खोला जाएगा।

विक्रम लालवानी, मैनेजिंग डायरेक्टर एवं सीईओ, स्टर्लिंग हॉलीडे रेसोर्ट्स लि. ने कहा उदयपुर देश में लैज़र डेस्टिनेशन के लिहाज से अपनी खास पहचान बना चुका है। उदयपुर में हमारे कुल 3 रेसोर्ट्स हैं जहां हम लैज़र, कॉन्फ्रेंस और डेस्टिनेशन वैडिंग्स जैसे अलग-अलग वर्गों में पेशकश करते हैं। स्टर्लिंग अरावली उदयपुर के मालिक राजकुमार बापना ने कहा कि यह स्टर्लिंग अरावली उदयपुर के लिए वाकई खास मौका है। हमारा रेसोर्ट अपने भव्य डिजाइन और सुविधाओं के चलते एक लैंडमार्क डेस्टिनेशन है। हम स्टर्लिंग के साथ भागीदारी कर प्रसन्न हैं।

वृक्ष हमारे जीवन के आधार हैं : प्रो. सारंगदेवोत

उदयपुर (ह. सं.)। भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय की कन्या इकाई की राष्ट्रीय सेवा योजना एवं एनसीसी इकाई द्वारा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के 'एक वृक्ष मां के नाम' संदेश के तहत महाविद्यालय परिसर में वृक्षारोपण किया गया। इस अवसर पर भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय के चेयरपर्सन कर्नल प्रो. शिवसिंह सारंगदेवोत एवं भूपाल नोबल्स संस्थान के प्रबंध निदेशक मोहब्बतसिंह राठौड़ द्वारा नीम, आम, जामुन, अमरुद आदि पौधों का रोपण किया गया।

सारंगदेवोत ने कहा कि वृक्ष हमारे जीवन के आधार हैं और प्रत्येक भारतीय को एक वृक्ष मां के नाम लगाकर उसकी देखभाल की जिम्मेदारी लेनी चाहिए जिसके माध्यम से ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावरणीय समस्याओं से मुक्ति प्राप्त कर सकते है। मोहब्बतसिंह राठौड़ ने कहा कि स्वयं सेविकाओं एवं केडैटस को इसी तरह के अन्य सामाजिक और राष्ट्रीय कार्यक्रमों में अपना योगदान करना चाहिए।

संस्थान के मंत्री डॉ. महेन्द्रसिंह आगरिया ने इस प्रकार के आयोजनो की सराहना करते हुए कहा कि वर्तमान स्थिति में पौधारोपण के माध्यम से प्रकृति से जो हम ले रहे हैं, उसका आशिंक हिस्सा पुन: लौटाने का ही प्रयास कर रहे हैं। अधिष्ठाता डॉ. शिल्पा राठौड़ ने कार्यक्रमों में युवाओं की भागीदारी को महत्वपूर्ण बताया।

इस अवसर पर स्वयं सेविकाओं, एनसीसी केडैटस एवं संकाय सदस्यों द्वारा पौधारोपण किया गया। एनएसएस नोडल अधिकारी डॉ. ज्योतिरादित्यसिंह भाटी, कार्यक्रम अधिकारी डॉ. लोकेश्वरी राठौड़ एवं मेजर डॉ. अनिता राठौड़ ने वृक्षारोपण के महत्व पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर डॉ. प्रेमसिंह रावलोत, डॉ. रेणु राठौड़, डॉ. रितु तोमर, डॉ. देवेन्द्रसिंह सिसोदिया, डॉ. अपर्णा शर्मा, डॉ. माधवी राठौड़, डॉ. गरिमा बाबेल, डॉ. मोहनसिंह राठौड़, डॉ. नरेशकुमार पटेल, डॉ. जयश्री सिंह, डॉ. परेश द्विवेदी, डॉ हुसैनी बोहरा आदि उपस्थित थे।

कुशाग्र फिजिक्स वाला के ऑनलाइन अध्ययन से बने सीए इंटर टॉपर

उदयपुर (ह. सं.)। फिजिक्स वाला ने मई 2024 की सीए इंटरमीडिएट परीक्षा में ऑल इंडिया रैंक 1 हासिल करने का गौरव प्राप्त किया है। इस उपलब्धि को हासिल करने वाले विद्यार्थी भिवाड़ी निवासी कुशाग्र रॉय ने रैंक 1, हरियाणा के रोहन गुप्ता ने रैंक 30, सीलमपुर के अरमान खान ने रैंक 48 और महाराष्ट्र के जय संजीव करोशी ने रैंक 49 प्राप्त।

फिजिक्स वाला के संस्थापक और सीईओ, आलख पांडेय ने कहा कि कुशाग्र ने पीडब्लू के सीए इंटरमीडिएट उदेश रेगुलर (जी1+जी2) मई 2024 बैच का हिस्सा बनकर ऑनलाइन कक्षाओं के माध्यम से इस परीक्षा की तैयारी की। यह उनका पहला प्रयास था। उन्होंने सफलतापूर्वक फाउंडेशन स्तर पार किया, जिसकी तैयारी उन्होंने सीए वाला, पीडब्लू के सीए वर्टिकल की ऑनलाइन कक्षाओं के माध्यम से की थी। कुशाग्र ने कहा कि मैंने इस साल की सीए इंटर परीक्षा के लिए घर पर ही फिजिक्स वाला की ऑनलाइन कक्षाओं के साथ तैयारी की। मेरा लक्ष्य था कि मैं जितना हो सके उतनी तैयारी करूँ और परीक्षा के लिए सिद्ध रहूँ। मेरे पिता की निरंतर प्रेरणा और पीडब्लू की कक्षाओं ने मुझे एकीकृत दृष्टिकोण प्रदान किया जिससे मेरा अभ्यास और आत्मविश्वास बढ़ा। मुझे 400 में से 336 अंक मिले।

'नेक्सस वन' मोबाइल ऐप लॉन्च

उदयपुर (ह. सं.)। नेक्सस सेलिब्रेशन मॉल ने 'नेक्सस वन ऐप' लांच करने की घोषणा की है। यह ऐक्सक्लूसिव मोबाइल ऐप नेक्सस ब्रांड के इस वादे के मुताबिक है कि वह पूरे परिवार के लिए बेहतरीन अनुभवों को पेश करता रहेगा। 'नेक्सस वन ऐप' इनोवेटिव है जो अपने यूजर-फ्रैंडली फीचर्स के संग आपके शॉपिंग अनुभव को बेहतर बनाएगा। यह ऐप ग्राहकों को पूरे साल विशेष उपहार मुहैया कराएगा।

नेक्सस सिलेक्ट ट्रस्ट के चीफ मार्केटिंग ऑफिसर निशंक जोशी ने कहा कि नेक्सस वन ऐप उदयपुर में हमारे ग्राहकों को एक नया आयाम देगा। हमने हमेशा यह कोशिश की है कि अपने ग्राहकों को जितना बढ़िया अनुभव हो सके वह प्रदान करें। नेक्सस वन ऐप और इसके अनूठे फीचर्स के साथ नेक्सस मॉल्स में आने वालों का अनुभव और भी बेहतर होगा। इस ऐप में हमारा लॉयल्टी प्रोग्राम हमारी बहुत पसंदीदा की जाने वाली 'शॉप एंड विन' गतिविधियों के संग जुड़ गया है। आगामी त्योहारी मौसम के लिए हमारा लक्ष्य है कि इस ऐप के जरिए सर्वोत्तम शॉपिंग अनुभव पेश किया जाए। इस ऐप को पहली बार इस्तेमाल करने वालों को फ्री-पार्किंग की सुविधा मिलेगी। इसके अलावा मॉल में 5000 रुपए से अधिक की खरीददारी करने वाले ग्राहक तोहफे के पात्र होंगे जिन्हें गिफ्ट वाउचर, ब्ल्यूटूथ स्पीकर, डफल बैग, साउंड बार, चाँदी के सिक्कों और यहां तक की सोने के सिक्कों के लिए भी रिडीम किया जा सकेगा।

किराये का मकान

– माधव नागदा –

अब तक तो मैं यही समझ रहा था कि मकान हमारा अपना है। इस बात को लेकर मैं और पिंटू कई बार झगड़ भी चुके थे। वह कहता, 'मकान मेरा है, तुम किराये पे रहते हो।' मैं उलझता, 'नहीं, तुम किरायेदार हो। मैं मकान मालिक हूँ। ' और अब पिताजी मम्मी से कह रहे थे, 'हमें दूसरा मकान देखना होगा, मकान मालिक की बेटी की शादी है।'

'कोई शादी-वादी नहीं है। सब बहानेबाजी है। ज्यादा किराया देने वाले मिल गए होंगे। मनुष्य भी कैसा हो गया है। पैसों के लिए बरसों पुराना व्यवहार तोड़ देता है।' मम्मी जल-भुनकर बोली।

मकान खाली करते हुए मुझे बहुत दु:ख हो रहा था। गुस्सा भी खूब आ रहा था। मैंने आव देखा न ताव, छत पर जाकर रंग-बिरंगे फूलों के तमाम गमले पटक कर टुकड़े-टुकड़े कर दिए। ये गमले मैंने और भैया ने बेकार मटकों में मिट्टी भरकर बनाये थे। फिर मैंने अपने अध्ययन कक्ष की दीवारों से रंगीन और चिकने कागज वाले अखबार उखाड़ डाले। यही नहीं, दरवाजे पर लिखे 'स्वागतम्' को भी मैंने मिटा दिया। अब मैं किचन गार्डन की ओर लपका, जहाँ मम्मी-पापा ने भिण्डी, टमाटर और बैंगन लगा रखे थे। वहीं एक अंगूर की हरी-भरी मस्त बेल भी छायी हुई थी।

'बंटी, सामान पैक हो गया है, चलो जल्दी। तुम्हारे पापा कहाँ गायब हो गए, उन्हें भी बुला लो।' मम्मी ने पुकारा। मैंने अनसुना कर दिया।

पापा क्यारी की मेड़ पर बैठे-बैठे पौधों को निरख रहे थे। मैं समझ गया कि वे भी इन्हें परमधाम पहुँचाना चाहते हैं।

'कुल्हाड़ी लाऊँ पापा?' मैंने पूछा 7 पापा चौंके। 'नहीं बेटा। जरा एक-दो बाल्टी पानी ले आओ। न जाने बेचारों को कब नसीब हो।' वे मेरी पीठ सहलाते हुए बोले। उनका चेहरा जूही के फूल की तरह मासूम और भोला लग रहा था।

मैं कुछ देर खामोश रहा, फिर उनके गले में झूल गया। 'ओह पापा, इस तरह तो मैंने कभी सोचा ही नहीं था।'

चौमासे में बरसालू.....

(पृष्ठ तीन का शेष)

देराणी-जेठाणी अणबोले हैं और सास-बहू के आपस में बनती नहीं है। ऐसी स्थिति में हे प्रिये! मैं यहां कैसे रहूं और किस प्रकार बैरण रात काटूं।' इतना लिखने पर भी उसका पति नहीं आता है। फलत: वह उसके विरह में अत्यंत कृशकाय एवं अनमनी-सी हो जाती है।

ऐसी दशा में सखी-सहेलियों के साथ जब वह पानी जाती है तो एक सखी उससे पूछ बैठती है- 'सारी सहेलियों के छोटे-मोटे बेवड़े हैं, तुम्हारे यह काला पाता क्यों? सभी के हाथों में मेहंदी रची हुई है, तुम्हारे ये बिना मेहंदी के हाथ कैसे? सभी के सिर गूंथे हुए, तुम्हारे खुले बिखरे बाल कैसे? सभी के कसीदों की कांचली पहनी हुई, तुम्हारे यह फटी-मैली कैसे? सभी की आंखों में काजल है, तुम्हारी आंखें सूखी क्यों?' इन सभी बातों का वह केवल एक ही उत्तर देती हुई कहती है- 'सगलारे साजन घर बसे म्हारे पिउ बसे परदेश।' उसका यह उत्तर कितना मार्मिक एवं मर्मस्पर्शी है। इसलिए प्रिय है तो सब कुछ है। जीवन है। यौवन है। हास-परिहास और हंसी-दिल्लगी है। पति के बिना क्या है, यह जीवन भी धिक्कार है।

उसका असह्य विरह नाना गीतों में फूट पड़ता है-

थें तो जो बैठ्या पनामारू चाकरी जी धण रो कई छै हवाल।
सुधबुध सारी भुलायदी जी दीनी मोय बिसार।।
बारा बरस तो बीतग्या जी जोवत थांरी बाट।
नित उठ काग उड़ावती जी परदेशी री नार।।
बाबो छोड्यो जलम को जी छोड़ी सुगणी माय।
भाई छोड्या खेलता जी सात सहेल्यां रो साथ।।
सुरंगो पीवर छोड़ियो जी आई थारै लार।
थें मोय इण विध बिसार दी जी अब म्हारो कुण हवाल।।

अर्थात् - पनामारू! आप तो चाकरी पर जा बैठे, इधर आपकी धण का क्या हवाल है आपको क्या पता? सारी सुधबुध भूलकर आपने तो मुझे विस्मृत ही करदी। आपकी वाट निहारते-निहारते बारह वर्ष व्यतीत हो गये हैं। प्रतिदिन उठकर काग उड़ाती हूं और आपके आने के शकुन लेती हूं। आपके कारण मैंने जन्मदाता पिता छोड़ा, सुगणी माता छोड़ी, खेलते-कूदते भाई और सात सहेलियों का साथ छोड़ा। सुरंगा पीहर छोड़ा और आपका पल्ला पकड़ा। मगर आपने तो मुझे बिलकुल ही भुला दिया। अब मेरा क्या हाल है इसे मैं ही जानती हूं।

विरहशिला का यह गुरुत्तर भार अपनी हम-जलधारा से वह कब तक काटती रहेगी? राम के साथ लक्ष्मण भी वनवासी हुए परंतु उर्मिला को पता था कि लक्ष्मण चौदह वर्ष पहले नहीं लौटेंगे। अत: चौदह वर्ष तो उसे ज्यों-त्यों काटने ही पड़ेंगे परंतु यहां तो यह भी नहीं। पता नहीं प्रिय कब लौटें? प्रिय-विरह के ऐसे एक नहीं, सैंकड़ों गीत इस बात के साक्षी हैं जिनमें विरहिणियों ने फूट-फूट कर अपनी आंखें अंधी बनाई हैं और अपने तन का तिल-तिल झोंका है। उनकी वेदना, टीस, और पीड़ा की पराकाष्ठा का एक उदाहरण और लीजिये-

छप्पर पुराना पड़ गया है। बांस तिड़कने लगे हैं। बरसात की झड़ी लग रही है। प्रिय अब घर लौट आओ। कुआ हो तो लांघलूं पर यह समुद्र लांघा नहीं जाता। बालक हो तो रखलूं मगर यह यौवन कैसे रख पाऊं? कागज हो तो पढ़लूं मगर अपने भाग को कैसे पढ़ूं? तिनका हो तो तोड़दूं मगर प्रीत को कैसे तोडूं? न समुद्र की थाग लग सकती है न यौवन ही रखा जा सकता है। न भाग्य पढ़ा जा सकता है और न प्रीत ही तोड़ी जा सकती है।

कहना न होगा कि बरसात के गीत जहां एकओर प्रकृति का विराट सौंदर्य विकीर्ण करते हैं, सुख का अनंत सागर लहराते हैं वहां दूसरी ओर मानवजीवन के विविध रिश्तों-नातों में व्याप्त सौहार्द्र, साहचर्य और घनिष्टता को बढ़ावा देते हैं। प्रकृति और पुरुष का ऐसा शाश्वत योग यहीं देखने को मिलेगा।

ग्रामीण इलाके में विश्वस्तरीय सुविधाओं वाला वेलनेस सेंटर साबित होगा मील का पत्थर : कटारिया

बाठेड़ा कलां में राजस्थान के पहले नेचर थैरेपी होलिस्टिक वेलनेस सेंटर का उद्घाटन

उदयपुर (ह. सं.)। बाठेड़ा कलां में राजस्थान के पहले होलिस्टिक वेलनेस सेंटर का उद्घाटन असम के राज्यपाल गुलाबचंद कटारिया, अवधेशानंदजी महाराज, चेयरमैन राजेन्द्रकुमार नलवाया ने हवन यज्ञ के साथ किया। इस अवसर पर राज्यपाल ने कहा कि यह बहुत बड़ी बात है कि इस तरह का वेलनेस सेंटर ग्रामीण इलाके में स्थापित किया गया है। इसका भूमि पूजन भी मैंने देखा है, बिल्डिंग व सभी सुविधाएं भी देखी हैं। इंडिया के बेस्ट प्राकृतिक चिकित्सकों की सेवाएं यहां पर उपलब्ध होंगी। अपने ट्राइबल एरिया में इस तरह के सेंटर पर लोगों के आने जाने का क्रम चालू होगा तो मैं समझता हूं कि इस तरह के कई और भी सेंटर भी ट्राइबल एरिया में खुल सकेंगे। हमें प्रकृति ने बहुत कुछ दिया है लेकिन इसका सही रूप से पब्लिक वेलफेयर में उपयोग हो, यह जरूरी है।

चेयरमैन राजेन्द्रकुमार नलवाया व वाइस चेयरमैन योगेश कुमार ने बताया कि डॉ. श्याम नदुगले व उनकी टीम की देखरेख में इस राजबाग होलिस्टिक वेलनेस सेंटर पर नॉन क्यूरेटिव व क्यूरेटिव बीमारियों का उपचार होगा। यह वेलनेस सेंटर राजस्थान में अपनी तरह का पहला व अनूठा सेंटर है जिसका संचालन ट्रांस होटल एंड रिसोर्ट्स हैदराबाद के माध्यम से होगा। उन्होंने कहा कि हमारा मानना है कि व्यक्ति प्राकृतिक जीवन शैली अपनाते हुए प्राकृतिक औषधियों व विशेषज्ञ चिकित्सकों की मदद से किसी भी प्रकार की बीमारी में अधिकतम अच्छे परिणाम हासिल कर सकता है। नेचुरापेथी, योगा, आयुर्वेद, फिजियोथेरेपी, ट्रेडिशनल चाइनीज मेडिसिन जैसे एक्यूपंचर, एक्यूप्रेशर, कपलिंग थैरेपी, म्यूजिक थेरेपी आदि के माध्यम से यहां उपचार किया जाएगा। जो लोग केवल इस थेरेपी को एक्सपीरियंस करना चाहते हैं वे तीन दिन के लिए तथा जो किसी भी प्रकार की थेरेपी लेना चाहते हैं वे 10 से 15 दिन जैसा भी चिकित्सक सलाह हो, उसके अनुसार यहां रह सकते हैं। यहां 35 बीघा में 20 कॉटेज की फेसिलिटी है 40 गेस्ट रह सकते हैं। भविष्य में 60 कॉटेज तक की फेसिलिटी विकसित की जाएगी।

नलवाया ने बताया कि राजस्थान के पहले नेचर थैरेपी राजबाग हॉलिस्टिक वेलनेस सेंटर में सबसे पहले यहां आने वालों की बीएमआई मशीन से 40 पेज की रिपोर्ट निकाली जाएगी ताकि यह पता चल सके कि किस तरह की थैरेपी देनी है, कौनसा फूड देना है। यहां के रेस्टोरेंट में हर व्यक्ति के लिए व्यक्तिगत मैन्यू तय होगा जो उनकी जरूरतों व बॉडी की रिक्वायरमेंट के अनुसार होगा। योगा, मेडिटेशन सेंटर, पिरामिड मेडिटेशन, लेवरेंथ गार्डन आदि भी है। सबसे बड़ी बात यह है कि यहां आने वाला किसी भी प्रकार का नशा नहीं करेगा, मोबाइल की परमिशन भी कुछ समय के लिए ही होगी। हर बीमार अपनी लाइफ स्टाइल के कारण होती है। यहां पर हम लाइफ स्टाइल में बदलाव के साथ ही अन्य सहायक थैरेपी की मदद से हीलिंग करेंगे। यहां वाटर हार्वेस्टिंग के साथ ही दो एनिकट जिसमें एक मेडिकेटेड एनिकट है, रेन वाटर हार्वेस्टिंग, स्टाफ रेजिडेंशियल है। स्प्रिच्यूअल एनर्जी पर भी काम करेंगे। कॉस्मिक एनर्जी, जियो एनर्जी से मिल कर हमारा जीवन चलता है। ट्रेनर उस उर्जा विज्ञान के जानकार हैं, जीवन में अमेजिंग परिवर्तन आएगा। जिनको दवाई नहीं लग रही है, उनकी बॉडी व कॉस्मिक एनर्जी डिस्र्ब होती हैं उसको उचित मार्गदर्शन द्वारा व्यवस्थित किया जा सकता है।

इस अवसर पर प्रेमदेवी नलवाया, आनंद सिंह राठौड़, राघवेन्द्रसिंह राठौड़, जितेन्द्रसिंह राठौड़, हिम्मतसिंह चौहान, अनिल अग्रवाल, निष्काम दिवाकर, सावन कुमार चायल, सुमित गोयल, महिपाल सिंह, अश्विनी सिसोदिया, डॉ. तुक्तक भानावत, महेन्द्रपाल सिंह, भूपेन्द्र बाबेल, जितेन्द्र आंचलिया, सुरेश नाहर, रूपेश मेहता, राजकुमार फत्तावत, गौरीकांत शर्मा, विनयदीपसिंह कुशवाह, सुनील टेलर, मयूरध्वज सिंह, बनाराम चौधरी, राजेन्द्रसिंह राव, शांतिलाल सिंघवी, नितुल चंडालिया, प्रकाशचंद्र मेनारिया, लोकेश कुमार, आदि गणमान्य नागरिक उपस्थित थे।

अपना देश अपनी संस्कृति

नौटंकी नामकरण

नौटंकी नामकरण के सम्बन्ध में कई बातें प्रचलित हैं। पंजाब के बादशाह की एक अत्यन्त रूपवती शहजादी थी। वह इतनी नाजुक और कोमलांगी थी कि प्रतिदिन केवल नौटंका आहार लेने के कारण लोकजीवन में यह शहजादी नौटंकी के नाम से लोकप्रिय हुई। आगे जाकर इसी नौटंकी का एक युवक से प्रेम हो गया। नौटंकी नामक खेल में इस नौटंकी की कथा बहुचर्चित है।

यह भी कहा जाता है कि प्रारम्भ में नौटंकी ख्यालों में नौ प्रकार के वाद्य बजाये जाते थे अत: यह नाम पड़ा। एक किवदंती यह भी है कि इन ख्यालों में नौ नक्काड़े-नक्काड़ियों का प्रयोग किया जाता था। नक्काड़ों की प्रधानता तो इनमें आज भी मिलती है। राजस्थान के इन ख्यालों को इसीलिए 'नक्काड़ेबाजी के ख्याल' भी कहते हैं।

एक बात यह भी सुनने को मिलती है कि प्रारम्भ में इन ख्यालों में नक्काड़ों की प्रमुखता के साथ-साथ ढोलक, ढपली, सारंगी व चिकारा बजाया जाता था। इसमें तीन नक्काड़े बजाने वाले, दो ढोकल वाले, दो ढपली वाले तथा एक-एक सारंगी-चिकारा बजाने वाले होते थे। कुल नौ साजिन्दों के कारण ये ख्याल 'नौटंकी' के रूप में प्रचलित हुए।

राजस्थान का भरतपुर इलाका इन ख्यालों के लिए बड़ा प्रसिद्ध है। यहां डींग में इन ख्यालों का प्रचलन सर्वप्रथम भूरीलाल स्वर्णकार ने किया। हाथरस में भी इन्हीं भूरीलाल ने मुरलीधर हरनारायण की मण्डली में नौटंकी खेल प्रारम्भ किये। मुरलीधर हरनारायण दोनों अच्छे खिलाड़ी और ख्याल-लेखक थे। इनके लिखे नौटंकी, लक्ष्मण शक्ति, रूक्मिणी मंगल, मलखान का ब्याह, ढोला-मारूं, लवकुश काण्ड, गुंजरी तथा भाईगीर ख्यालों ने बड़ी प्रसिद्धि पाई। भाईगीर के उत्कृष्ट प्रदर्शन के कारण भूरीलालजी की हाथी पर सवारी निकाली गई। डींग में आज भी भूरीलालजी का नाम स्मरण कराने पर वहां के लोग जमीन की माटी अपने सिर पर लगा कर उनके प्रति श्रद्धानत हो उठते हैं। भूरीलालजी संगीत के भी बड़े उस्ताद थे। कहते हैं, नौटंकी खेलों में एक बार नहीं, कई बार उन्होंने धूलिया मल्हार तथा मेघ मल्हार गाकर आंधी और बरसात को साक्षात कर दिया।

नत्थाराम ने नौटंकी ख्यालों में सर्वाधिक प्रसिद्धि पाई। इन ख्यालों को पेशेवर बनाने का श्रेय भी इन्हीं को है। भरतपुर की सुप्रसिद्ध गिरिराज संगीत मण्डली के संचालन गिरिराज नत्थारामजी के प्रमुख शिष्य खिलाड़ी थे।

नत्थारामजी ने नौटंकी के 35 के लगभग ख्याल लिखे। नौटंकी ख्यालों को इतना लोकप्रिय बनाने में भी इन्हीं का हाथ रहा है। इन ख्यालों में बेहरे तबील, दोहा, बेहरे शिक्स्त, लावणी सादी, लावणी लंगड़ी, जी की लावणी, कड़ा दबोला, चौबाला, कव्वाली, गजल, दादरा, ठुमरी जैसे छन्दों की प्रधानता रहती है। राजस्थान में नौटंकी ख्यालों के साथ-साथ नौटंकी-स्वांग भी प्रचलित है।

-डॉ. तुक्तक भानावत

फक्कड़ मिजाज के राजस्थानी रचनाकार वेद व्यास

- राकेश जैन -

वेद व्यास एक ऐसी शख्सियत ... जिन्होंने ताउम्र देश-प्रदेश के रचनाकारों-चिंतकों-लेखकों को मंच और माईक प्रदान किया है, लेकिन खुद को और अपने रचनाकार को हमेशा परदे के पीछे रखा। प्रगतिशील सोच को अपनी हर साँस में संजोकर जनहित को सदैव अपने जेहन में रखा।

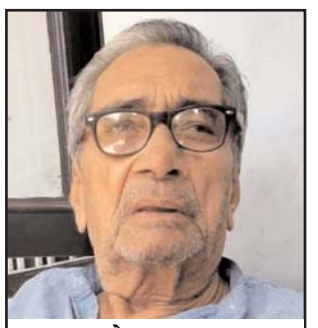
वेद व्यास

उन्होंने अपना समस्त जीवन, समाज में व्याप्त विभिन्न विकृतियों, विद्रूपताओं, अन्याय और अनीति के खिलाफ सतत् संघर्षशील रहते हुए व्यतीत किया है। उनका यह संघर्ष अब भी जारी है। अग्निधर्मा कलम के धनी, प्रगतिशील लेखक, चिंतक और विचारक, साहित्य अकादमी के पूर्व अध्यक्ष वेद व्यास स्वाधीन कलम के पैरोकार हैं।

वेद व्यास का जन्म 1 जुलाई,1942 को अविभाजित भारत के सिंध प्रान्त में मीरपुरख़ास में हुआ। इनका पुस्तैनी गाँव अलवर जिले की राजगढ़ तहसील का गढ़ी सवाई राम है। पूर्वज काम की तलाश में सिंध पहुंच गए थे। इनके पिताजी का नाम प्यारेलाल व्यास एवं माँ का नाम अशर्फी देवी था। भारत विभाजन के दौरान ये परिवार के साथ लूणी जंक्शन जोधपुर आ गये। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा लूणी जोधपुर में ही हुई।

वेद व्यास जब 20 साल के थे दसवीं तक पढ़े थे। घर वालों के तानों से तंग आकर लूणी जंक्शन से दिल दिमाग में नौकरी के नाम से अख़बार और आकाशवाणी का सपना संजोए जयपुर आ गये। जयपुर में दैनिक राष्ट्रदूत अखबार के मालिक हजारीलाल शर्मा इनके बहनोई मदनलाल शर्मा के दूर के रिश्तेदार थे। बहनोई मदनलाल शर्मा ने वेद व्यास के जीवन का पहला प्रशिक्षण और नौकरी 60 रूपए महीने में राष्ट्रदूत अखबार में लगवाई। यहाँ इन्हें दिनेश खरे, शिवपूजन त्रिपाठी, कैलाश मिश्र, सौभाग्यमल जैन, डॉ.जयसिंह एस राठौड़ तथा वीर सक्सेना आदि का सान्निध्य प्राप्त हुआ।

वेद व्यास ने बताया कि मुझे निरंजननाथ आचार्य, भैरोसिंह शेखावत, ज्वालाप्रसाद शर्मा, प्रो. केदार शर्मा आदि की वह गोष्ठियां भी खूब याद हैं जिनमें हजारीलाल शर्मा एक अक्खड़ और फक्कड़ मित्र की तरह गुंजायमान रहते थे। राष्ट्रदूत में छह माह तक रहे और फिर राजस्थान ललित कला अकादमी और वानर (बाल मासिक पत्रिका) में कार्यरत रहते हुए सन् 1964 में आकाशवाणी जयपुर में चले आए। आकाशवाणी में ये 30 जून, 2002 सेवानिवृत्ति तक पदासीन रहे।

आकाशवाणी जयपुर से राजस्थानी भाषा में प्रथम समाचार वाचक रहे। आकाशवाणी में कार्यरत रहते हुए ही वेद व्यास ने 1983 में नई दिल्ली में आयोजित तीसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन में भागीदारी की। वेद व्यास ने 1999 में लन्दन में हुए छठे विश्व हिन्दी सम्मेलन में एवं 2003 में सूरीनाम में आयोजित सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में राजस्थान सरकार द्वारा प्रतिनिधित्व किया।

ये शिक्षा, साहित्य, कला, संस्कृति और पत्रकारिता के क्षेत्र में लगातार लेखन करते हैं। दैनिक नवज्योति का साप्ताहिक स्तम्भ 'ध्यानाकर्षण' और बाद में 'उल्लेखनीय' स्तम्भ इनके साहित्य, समाज और समय के 50 साल के मुखर गवाह रहे हैं। हिन्दी और राजस्थानी में रचनाकर्म करते हुए वेद व्यास ने लम्बी लकीर खींची है।

समय के सच को लिखना इनकी आदत है। राजस्थानी भाषा की सेवा करने के लिए ही ये आकाशवाणी में राजस्थानी समाचार वाचक रहे। वेद व्यास ने राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर के सन् 1983 से 1986 तक उपाध्यक्ष एवं सन् 1989 से 1992 तक अध्यक्ष के पद को सुशोभित किया है।

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर के ये तीन बार सन् 1993 से 1994, 2002 से 2005 एवं 2011 से 2013 अध्यक्ष रहे हैं। ये राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर की संविधान निर्मात्री समिति, केन्द्रीय साहित्य अकादमी के पुरस्कार चयन एवं निर्णायक समिति, राज्य सरकार के केन्द्रीय पुस्तक क्रय समिति, राज्य पुस्तकालय विकास समिति के सदस्य रहे हैं।

राकेश जैन

राजस्थान प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना सन् 1973 में इन्होंने ही की और स्थापनाकाल से महामंत्री रहे हैं। इन्होंने 1992 में भाईचारा फाउण्डेशन के नाम से संस्था की स्थापना की, जो गरीब एवं अनाथ बच्चों के लिए सेवा कार्य कर रही है। ये 2011 से जयपुर से प्रकाशित पाक्षिक पत्र 'जनयात्रा' के संस्थापक भी हैं।

वेद व्यास जब तीसरी बार राजस्थान साहित्य अकादमी के अध्यक्ष बने तो मधुमती नवम्बर - 2013 का 'बाल साहित्य विशेषांक' निकाला, जिसकी अतिथि सम्पादक डॉ. विमला भण्डारी रही। यह अंक बच्चों के भविष्य के प्रति वेद व्यास की चिन्ता और जागरूकता को भलीभांति दर्शाता है।

इनकी पहली पुस्तक सन् 1966 में जाने-माने कवि हनवन्तसिंह देवड़ा और नये व होनहार कवि चिन्तनशील वेद व्यास दोनों के गीतों की पुस्तक 'धरती हेलो मारै' प्रकाशित हुई थी। 'धरती हेलो मारै' पुस्तक में हनवन्तसिंह देवड़ा के 9 गीत और वेद व्यास के 16 गीत है। राजस्थानी भाषा में ही वेद व्यास ने रावत सारस्वत के साथ मिलकर 1968 में 'आज रा कवि' पुस्तक का सम्पादन किया। इस पुस्तक में सन् 1947 से सन् 1967 तक बीस वर्ष की प्रतिनिधि 51 कवियों की राजस्थानी कविताओं का संकलन है।

सुख और शान्ति की आकांक्षा लेकर ही एक स्वप्निल मीठी भावना से मनुष्य अपने लिए परिवार का सृजन करता है। इस परिवार सृजन से आबादी बढ़ती है और परिवार नियोजन की आवश्यकता हुई। परिवार नियोजन के राष्ट्रीय महत्व वाले रूप को अभिव्यक्त का विषय बना लोकरूप को जनभाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास अपनी 1970 में प्रकाशित गीत-पुस्तक 'कीड़ीनगरो' में किया। राजस्थानी भाषा में मानव के कल्याण का संदेश 'कीड़ीनगरो' पुस्तक में काव्य के माध्यम से किया है। इनके परिवार नियोजन सम्बन्धी गीतों, कविताओं के संकलन 'कीड़ीनगरो' एक समर्थ, अर्थ-गर्भित और फबता हुआ शीर्षक है जो अपने आप में विषय को स्पष्ट करता है।

महात्मा गांधी के 150वें जन्मदिवस पर 42 कवियों द्वारा महात्मा गांधी के जीवन चरित्र पर रचित राजस्थानी भाषा की कविताओं का संकलन सन् 2000 में 'आजादी रा भागीरथ : गांधी' प्रकाशित हुआ। इसका सम्पादन वेद व्यास व श्याम महर्षि ने किया। इस संग्रह में राजस्थानी भाषा के 87 रचनाकारों की कविताएं हैं। राजस्थानी भाषा में वेद व्यास की अन्य प्रकाशित रचनाएं गांधी प्रकाश (राजस्थानी गीत), बारखड़ी (राजस्थानी सम्पादन),सबद उजास (राजस्थानी सम्पादन) है।

किसी देश या राष्ट्र की पहचान, उसमें रहने वाले लोग, उसकी प्रकृति, उसकी इमारतें, उसके तीज-त्यौहार, धार्मिक सांस्कृतिक स्थल, उनका साहित्य, संगीत आदि ही होते हैं। भारत इन सन्दर्भों में बहुरंगी छटाओं का देश है। अलग-अलग प्रान्तों और जातियों की अपनी-अपनी समृद्ध परम्पराओं के कारण, अपनी अलग-अलग जीवन शैलियां हैं, अपने अलग-अलग सांस्कृतिक मूल्य हैं। यह अनेकता ही भारत की एकता का मूलाधार है। अनेकता को ही एकता मानने की दृष्टि ही सही भारतीय दृष्टि है और इसी दृष्टि का साक्षात्कार होता है वेद व्यास की पुस्तक 'राष्ट्रीय धरोहर' में।

सन् 1995 में प्रकाशित 'राष्ट्रीय धरोहर' पुस्तक उस प्रगतिशील सोच और विचार की अवधारणा भी है जो सामान्यजन के सनातन काल से चले आ रहे संघर्ष का परिणाम है। वेद व्यास के सम्पादन में राजस्थान के तीर्थों की परिक्रमा के बिखरे चित्रों को 'राजस्थान के लोकतीर्थ' पुस्तक में प्रस्तुत किया है।

एक मुकम्मल इंसान और कलमकार वेद व्यास निष्ठा और कौशल से गुरु गम्भीर विषयों पर लिखते रहे हैं। बच्चे ही हमारे भावी कर्णधार हैं। वेद व्यास ने मधुर शब्द योजना के साथ-साथ बच्चों के लिए आशावाद, राष्ट्रप्रेम और धार्मिक सहिष्णुता का सन्देश देते हुए बालगीतों की रचना की है। सहज सरल बोधगम्य बाल रचनाओं का खजाना है वेद व्यास के बाल गीतों का संग्रह 'एक देश मेरे सपनों का'। बालगीतों की इनकी पूर्व में प्रकाशित पुस्तकें हैं - सन् 1981 में 'भारत वर्ष हमारा है' एवं सन् 1984 में 'एक बनेंगे नेक बनेंगे'।

'अब नहीं तो कब बोलोगे' निबन्ध संग्रह में वेद व्यास के 27 निबन्ध हैं। निबन्ध आकार में छोटे लग सकते हैं लेकिन इन छोटे निबन्धों में व्यक्त विचार और तर्क बड़े हैं जो दिशाबोधक और प्रेरक कहे जा सकते हैं।

अपनी जीवन यात्रा के 81वें पड़ाव पर वेद व्यास का 24वां प्रकाशन 'अविस्मरणीय' 2023 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में कुल 34 स्मृतियां हैं जिनमें चार यादों को कॉमरेड ज्योति बसु, शहीद भगतसिंह, कार्ल मार्क्स एवं स्वामी विवेकानन्द के अलावा शेष सभी 30 स्मृतियां वेद व्यास के उन समकालीनों पर केन्द्रित हैं, जो आज हमारे बीच नहीं हैं।

वेद व्यास की साहित्य एवं पत्रकारिता के बीच की यात्रा को जानने का जरिया है स्मृति संग्रह 'अविस्मरणीय'। स्मृति संग्रह 'अविस्मरणीय' में आलेख- तीन खण्डों में साहित्य, समाज और समय पर केन्द्रित है। वेद व्यास लिखते हैं कि विचारों के सागर में एक बूंद का जीवन ही मेरा परिचय है और आगत कल का सपना है।

इनका विवाह दस साल जयपुर महाराजा की सेवा में रहे तत्पश्चात् 20 वर्ष तक राजस्थान की राजधानी जयपुर की गवर्नमेंट हॉस्टल के अधीक्षक रहे मोहनलाल शर्मा एवं श्रीमती रामप्यारी देवी की सुपुत्री सुमन के संग 20 नवम्बर, 1969 को जयपुर में सम्पन्न हुआ। सुमन शर्मा ने पांच विषयों हिन्दी, समाज शास्त्र, लोक प्रशासन, राजनीति विज्ञान एवं इतिहास में एम.ए. करने के साथ ही पत्रकारिता में भी अध्ययन किया है। इन्होंने 1990 में पत्रकारिता में डिप्लोमा लिया है। इनके दो पुत्रियां रचना व प्रगति तथा एक पुत्र विचार व्यास है।

राजस्थान साहित्य अकादमी के विशिष्ट साहित्यकार सम्मान और राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अकादमी के राजस्थानी भाषा सम्मान सहित मिले विभिन्न मान-सम्मान वेद व्यास के लेखन की साख को सवाया करते हैं। साहित्य अकादमी के सर्वोच्च सम्मान 'साहित्य-मनीषी' से सम्मानित वेद व्यास को सम्मान स्वरूप 2 लाख 51 हजार रुपए तथा सम्मान पत्र प्रदान किया गया।

पंखी : घुंघरूवाली

- डॉ. प्रिया सूफी -

ग्रीष्म ऋतु के अपने कई निजी विधान हैं और नहाने से लेकर पहनने ओढ़ने तक जो विधियां हैं, वे सावधानियां और हमारी गरमी से मुकाबले की तैयारियां होती हैं। तब कहा जाता है कि गर्मी का प्रकोप दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है, मानसून की आहट उत्तर भारत में दूर तक दिखाई नहीं दी है। केवल पंखे, कूलर से कोई लाभ नहीं हो रहा। एसी के बिना लगता है जैसे जीना ही मुश्किल हो गया है। आजकल के बच्चे तो एसी के बिना सांस भी नहीं लेते हैं परन्तु हमारी उम्र के लोगों को याद होगा कि कभी वो दिन भी थे जब हम कमरों की घुटन और पंखे की गर्म हवा से भाग कर हर रात छत पर जा चढ़ते थे। दिन भर की गर्म हवा रात गहराते ही ठंडी होने लगती थी।

हर रात हम अपनी बाण से बनी चारपाई पर पानी छिड़क कर ऊपर से गीली सफेद चादरें लेकर सोते थे। गीली चादर में गर्म हवा भी ठण्डी लगती थी और झट से नींद आ जाती थी और, दिन में जब भरी दोपहरी में लाइट चली जाती थी, जो उन दिनों अक्सर ही होता था तो याद आती थी लकड़ी के हत्थे वाली, कपड़े की झालर से सजी, मां के हाथ की कढ़ाई से सजी पंखी। कितने की रूप रंग होते थे इस पंखी के। कहीं लकड़ी के रेशे निकाल कर उन्हें आपस में गूंथ कर बनाई पंखी तो कहीं गोल की बजाय एक तरफ घूमने वाली पंखी। उस समय पंखी का जलवा इतना था कि गांव खेड़े में तो हर घर में सब से खूबसूरत पंखी बनाने की प्रतियोगिता सी चलती थी। यहां तक कि शादी के समय सुन्दर पंखी बनाना भी लड़की का एक जरूरी गुण देखा जाता था।

लड़कियां भी तो अपनी शादी के लिए खूबसूरत घुंघरू लगी पंखी बनाती, बनवाती थी। अब सब तो पंखी बनाना नहीं जानती थी पर कोई यह ज़ाहिर नहीं करता था। वो भी क्या दिन थे जब पंखी पर गीत बनते थे। साजन से गुज़ारिश की जाती थी कि अपनी प्यारी से मिलना है तो मुझे पंखी घुंघरू वाली ले कर दो।

कितने भोले से दिन थे मासूम से... पंखी के घुंघरुओं से संदेश भेजे जाते थे। साजन की दी पंखी के घुंघरुओं के बजने से साजन की याद आती थी। कहां चले गए वो प्यार भरे दिन जब मां पूरी रात अपने सोए बच्चों के लिए पंखी झलती सारी रात ऐसे ही काट देती थी। जब घर आए मेहमान को घर की सब से सुंदर पंखी दी जाती थी यह कह कर कि इससे हवा ज्यादा आती है। एसी कितनी भी ठण्डक दे दे पर वो रात भर मां की पंखी से दी हवा से ज्यादा ठण्डक नहीं दे पाती। कितने मीठे से दिन थे।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 904, आर्ची आर्केड, राम-लक्ष्मण वाटिका के पास, न्यू भूपालपुरा उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं
मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत।
फोन : 0294-2429291, मोबाइल-9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।